- तृतीय अध्याय -

“शेवडे के उपन्यासों के नारी-पात्र”

– तृतीय अध्याय –

गोखले के उपन्यासों के नारी-पात्र

अ] प्रस्तावना

ब] नारी-पात्रों की परिचय-

१] "[illegible]" की "सुशीला"

२] "[illegible]" की "[illegible]"

३] "मृगजल" की "मरियम"

४] "मृगजल" की "मायादेवी"

५] "पूर्णिमा" की "पूर्णिमा"

६] "ज्वालामुखी" की "[illegible]"

७] "अंचला" की "अंचला"

८] "[illegible]" की "सुहासिनी"

९] "अधूरा सपना" की "सुहासिनी"

१०] "[illegible]" की "वीणा"

११] "अमृतकुम्भ" की "[illegible]"

- तृतीय - अध्याय -

शौचडे के उपन्यासों के नारी-पात्र

प्र स्ता व ना -

साहित्य की विधाओं में उपन्यास यह एक महत्वपूर्ण विधा है। उपन्यास केवल समाज का ही प्रतिबिंब प्रस्तुत नहीं करता बल्कि समाज के प्रतिबिंब के साथ-साथ वह मनुष्य जीवन परिवर्तित रूप में बदलने की क्षमता भी रखता है। उपन्यास मनुष्य की यथार्थता और वास्तविकता से बना एक घर माना जाता हैं। इसी कारण मानव जीवन का विस्तृत और परिपूर्ण चित्रण उपन्यास को छोडकर अन्य किसी विधाओं में संभव नहीं हैं।

जो भी उपन्यास लिखने की चेष्टा करता हैं उसे पात्रों के चरित्र-चित्रण की ओर ध्यान देना ही पडता हैं। अपना प्रतिपाद्य बनाने के लिए उपन्यासकार अपने उपन्यासोंमें पात्रों की निर्मीती करता हैं। उपन्यास का मूल आधार ही मानव और उसका चरित्र हैं। अत: उपन्यासमें पात्र तथा उनके चरित्र-चित्रों को बहुत ही महत्व देना पडता हैं।

पुरुष-पात्रों के साथ-साथ नारियों का चरित्र-चित्रण भी शुरू से होता आ रहा हैं। अगर किसी उपन्यासमें पुरुष के साथ नारी का चित्रण न हो तो वह उपन्यास अधुरा लगता हैं। नारी तथा उसका चरित्र पूर्वापार से लेकर आज तक एक कुतूहल का विषय रहा हैं। नारी जो पति के लिए चरित्र, संतान के लिए माता, समाज के लिए शालिल, विश्व के लिए दया तथा जीव-मात्रा के लिए करुणा संजोग करनेवाली एक महान प्रकृती हैं। इस प्रकृति को उघाडना उपन्यासकार के लिए एक चुनौती का विषय रहा हैं। आज तक जितने उपन्यासकारोंने उसके चरित्र को उघाडनेका प्रयत्न किया

हैं उसमें मेरे अल्पमत से कहना हो तो कह सकता हूँ कि, वे पूर्ण रूप से सफल नहीं हो पाये हैं, फिर भी उसके चरित्र को उघाडने का अनेक उपन्यासकारोंने भरसक चेष्टा की हैं, और उसमें वे काफी मात्रा में सफल भी हो चुके हैं। शेषडेने भी नारी चरित्र को प्रस्तुत करने का भरसक प्रयत्न किया है और उसमें वे अधिकांश मात्रा में सफल भी हुए हैं। यहाँ हमें उनके उपन्यासोंमें जो नारी-पात्र आये हैं उनका चरित्र - चित्रण प्रस्तुत कर आपके सामने रखना यही हमारा उद्दिष्ट हैं।

"निशागीत" की "सुशिला"

अनंत गोपाल शेवडे लिखीत गांधीवाद पर आधारीत "निशागीत" उपन्यास की नायीका "सुशिला" हैं। जिसकी आयु करीबन पैंतीस साल की हैं। कर्नाटक में रहती हैं। वह जाति की सारस्वत ब्राम्हण है, जो उसकी शादी कम उम्र में हुई थी। शादी के बाद छ: महिनोंमें ही उसका पति मर जाता है और वह बाल विधवा हो जाती हैं। विधवा हो जाने के बाद वह अपने ससूर के पास बारह साल गुजरती हैं। उसकी मृत्यू के बाद देवर के दुर्व्यवहार के कारण अपने हिस्से की जमीन - आयदाद बेंचकर माँ को साथ लेकर पूना आती हैं। वहाँ वह सेवा-सदन में भरती होकर मॅट्रिक तक शिक्षा लेती हैं। बाद में बी॰पी॰एन॰ए॰ का नर्सिंग और मिडवाईफरी का डिप्लोमा हासिल करके बंबई के किंग एडवर्ड मेमोरियल अस्पताल में नौकरी करने लगती हैं। उसका रंग गेहुआँ, डिलडौल ऊँचापूरा, हाथ-पाँव मजबूत, और आँखे बडी-बडी हैं। उसके इस बाहय रूप को देखकर किंग एडवर्ड मेमोरियल अस्पताल के छात्रोंने उसे "अम्मा" नाम दे दिया था। जीवन में अनेक आघात होने के कारण उसकी वृत्ति संयमी बन जाती हैं। वह अन्य नर्सों की तरह अपना सारा समय चहकने - फुदकने में न लगाकर मरिजों की सेवामें ही बीता देती हैं। उसकी सेवा और प्रेम-भाव से मरिज आनंदीत हो जाता हैं। उसके बारे में शेवडेजी लिखते हैं - "वह अपना काम इतनी आस्था और प्रेम से करती थी कि, मरिज कृतज्ञता से धन्य हो जाते। उसका दवा पिलाने का, थर्मामीटर लगाने का, मलमपट्टी बाँधने का तरीका ही कुछ ऐसा स्नेह पुर्ण था कि रोगी निहायत खुश हो उठते और हमेशा उसी की डयुटी की बाट जोहा करते।"[१]

१] अनंत गोपाल शेवडे - "निशागीत" पृष्ठ २३.

वह केवल अस्पताल में ही नौकरी नहीं करती थी इसके अतिरीक्त बंबई की "जुनी परेल" की पुरानी बस्ती में तथा कोलीवाडा के मजदूरों तथा दरिद्रों की बस्ती में दवा देती थी। स्वयं गरिबों की झोपडीयों में, कंगाल मजदूरों की चालों में, दवाईयाँ का बक्सा लेकर बिना बुलाये घुमा करती थी और उन्हे मुफ्त दवाईयाँ दिया करती थी।

किंग एडबर्ग अस्पताल में उसकी भैंट डॉ॰ मधुसूदन से होती हैं। वह डॉक्टर को एक बसोडन स्त्री को बचाने के लिए मदद करती हैं। उस समय का उसका व्यवहार देखकर डॉ॰ मधुसूदन उसकी ओर आकर्षित होते हैं। और निश्चय करते हैं कि, ऐसी ही वृत्ती की स्त्री मेरे अस्पताप में नर्स के रूप में मिल जाय तो अच्छा होगा। वह अपनी प्रॅक्टीस पूरी करने के बाद जब नागपूर में अपना अस्पताल खोलता हैं तब वह सुशिला को खत लिखकर बुला लेता हैं। मधुसूदन का पत्र पाते ही सुशिला आनंदीत होती हैं। क्योंकि जिंदगी भर पुरुष के स्नेह से वंचित रहकर सुशिला का हृदय एक आतप्त जमीन की तरह शुष्क और पिपासीत हो गया था। अत: वह समझती है कि मधुसूदनने उसे पत्र भेजकर उसका सम्मान ही किया हैं। और तुरन्त खत का जबाब देती हैं। वह अपने खत में लिखती हैं -

श्री डॉक्टर साहब,

आपका कृपा - पत्र मिला हार्दिक धन्यवाद। आपने अपने ध्येय के बारे में जो विचार व्यक्त किये उन्हे जानकर खुशी हुयी। मैं आपके प्रस्ताव का स्वागत करती हूँ। आपने मेरे बारे में जो धारणाएँ बनायी है वे गलत साबित नही हो, यही ईश्वर से प्रार्थना है और यह भी प्रार्थना है कि, वह आपके ध्येय को सफल बनाये। इसमें यदि मैं तनिक सा भी सहयोग दे सकी तो मुझे प्रसन्नता होगी।"[1]

१] अनंत गोपाल शेवडे "निशागीत" , पृष्ठ ३३

A
12022

इसके कुछही दिनों बाद वह अपनी माँ को साथ लेकर मधुसूदन के अस्पताल आ जाती हैं। वहाँ वह जी जान से रोगीयों की सेवा करने लगती हैं जिसके कारण मधुसूदन का अस्पताल अच्छा चलने लगता हैं। वहाँ के प्रतिस्पर्धी डॉ॰ वर्मा उनसे इर्षा के कारण उनसे नफरत करने लगते हैं लेकिन इसतरफ वे बिलकूल ध्यान नहीं देते। अस्पताल में मरिजों की सेवा करते-करते वह दोनों एक दूसरें की ओर आकर्षित होते हैं। मधुसूदन जान लेता है कि, सुशिला के मन में उसके प्रति आदर हैं, कौतुक हैं, प्रेम हैं। इसलिए वह सुशिला के सामने विवाह का प्रस्ताव रख देता हैं। लेकिन सुशिला स्वार्थी न होने के कारण स्वयं को मधुसूदन के लिए अयोग्य मानती हैं। क्योंकि वह रूप में सुंदर नहीं थी, धनवान भी नहीं थी और उम्र में डॉक्टर से आठ साल बडी थी। अत: वह अपने सुख और स्वार्थ को दबा कर डॉक्टर के विवाह के प्रस्ताव को अस्वीकार करती हैं। तब डॉक्टर निराश होकर चले जाते हैं। बादमें सुशिला अपनी सहेली "पद्मा" को बुलाकर सबकुछ बता देती हैं, तो पद्मा उसे कहती हैं कि, "तुमने प्रस्ताव को ठुकरा कर अच्छा नहीं किया।" साथ में यह भी कहती हैं, कि डॉ॰ वर्मा तुम्हारे दोनों के संबंधको लेकर अपवाएँ फैला रहा हैं।" तो सुशिला अपनी नौकरी का इस्तीफा देती हैं, और बंबई चली जाती हैं। वहाँ जाकर वह भगवान से प्रार्थना करती हैं कि, -

" हे अंतर्यामी भगवान, मेरे मन को तुम्ही जानते हो और तुम्ही कह सकते हो कि आज मैंने जो दिव्य किया है, वह मेरे प्राण-प्रिय मधुसूदन के हित में उचित था या नहीं। यदि उचित हैं तो इसका सारा लांछन और पीडा मुझीको दो और उसे कठोराघात से शीघ्र ही मुक्त करके उसके जीवन को स्नेह सुख से भर दो।"[१]

१] अ॰गो॰शेवडे "निशागीत" पृष्ठ ९०॰

इससे उसकी निस्वार्थता, परहित दक्षता, त्याग की भावना और प्रेम का आदर्श स्पष्ट होता हैं।

सुंदर, धनवान, उच्चशिक्षीत डॉ• मधुसूदन के साथ विवाह कर स्वयंम सुखी बनना सुशिलाने स्वीकार नहीं किया परंतु बारूद के विस्फोट में डॉक्टर की आँखे जानेपर नर्स सुशिला दु:ख में अंत-तक डॉक्टर का साथ देने और सेवा करने उसके पास आ जाती हैं। अन्धे डॉक्टर को लेकर वह पैतृक – खेत श्रीपूर में जाकर रहती हैं। दिन भर खेती-बाडी देखती हैं। होमिओपॅथी की दवाइयाँ देकर रोगीयों की सेवा करती हैं और बचा हुआ सारा समय डॉ• मधुसूदन की सेवा में लगा देती हैं।

इसीतरह सुशिला का यह समग्र चरित्र सेवा, प्रेम, त्याग, आदर्श, संयम, लगन, की मूर्ति बन जाता हैं। सचमुच सुशिला एक आदर्श प्रेमीका हैं, जो सुखकी नहीं बल्कि दु:खों और संकटों की साथीदार हैं। उसके व्यक्तित्व की गंभीरता, स्वार्थ हिनता, और त्याग की भावना, प्रशंसनिय हैं। "निशागीत" को बार-बार पढनेवाले पाठक "सुशिला" की इस मूर्ति के पूजक होते हैं।

(2) " निशागीत" की "पद्मावती चंद्रा " –

शेवडे लिखीत "निशागीत" उपन्यास के स्त्री पात्रों में सुशिला के बाद उल्लेखनिय स्त्री पात्र "पद्मावती चन्द्रा आती हैं। पुरे उपन्यास में चार स्थानों में इसकी झलक नजर आती हैं, फिर भी पाठक गण उसके व्यक्तित्व से प्रभावित हुये बिना नहीं रहता।

पद्मावती चन्द्रा ऐंग्लोवर्नाक्युलर गर्ल्स मिडिल स्कूल की प्रधानाध्यापिका

हैं। उसके परिवार में उसकी माँ के अलावा दो भाई और एक बहन हैं। उनके पालन पोषण का भार पद्मा पर ही हैं। वह अविवाहीता हैं। उसकी उम्र पच्चीस वर्ष की हैं। पद्मावती चन्द्रा अच्छी सहेली हैं क्योंकि वह सुशिला को हर विपत्तियों में साथ देती हैं और पथ प्रदर्शन भी करती हैं। सुशिला के आवास के एक हिस्से में ही रहती हैं। सुशिला और पद्मा के परिस्थियों में अधिकांश बातों में समानता होने के कारण उन दोनों में अधिक घनिष्ठता आ गयी थी। पद्मावती चन्द्रा भी डॉ. मधुसूदन से प्रेम करती है, लेकिन अपना प्रेम प्रकट नहीं करती, क्योंकि उसका चरित्र नाटक के किसी मौन पात्र की तरह हैं। सुशिला और पद्मा की दृष्टीकोन में अंतर हैं। सुशिला भविष्य की चिंता करती हैं, इसलिए वह मधुसूदन के विवाह के प्रस्ताव को ठुकरा देती हैं। जब यह बात वह पद्मा को बताती हैं तब पद्मा कहती हैं - "सुशिला बहन, तुम मुझसे बडी हो, पर क्या मैं पुछ सकती हूँ कि तुमने ऐसा क्यों किया ? इस तरह तुम डॉक्टर का अपमान नहीं कर रही हैं ?"[1]

इससे स्पष्ट होता है कि, पद्मा वर्तमान को सुधारने की पक्षधर हैं। तभी तो वह सुशिला को कहती हैं - "भविष्य की अनिश्चितता के लिए वर्तमान के निश्चित सत्य को ठुकराने चली हो बहन ? जानती हो इसका दुष्परिणाम क्या होगा ?"[2]

पद्मा का शक सही निकल जाता हैं। सुशिला नौकरी का इस्तिफा दे देती हैं और बंबई चली जाती हैं। कुछ दिनों बाद डॉक्टर जब पटाखों के सबसे बडे व्यापारी हाजी अब्बास बारूदवाला की दुकान

१] अ.गो.शेवडे "निशागीत" पृष्ठ ९७

२] अ.गो.शेवडे "निशागीत" पृष्ठ ९८.

पर रोगी को देखने के लिए जाता हैं, तो वहाँ अचानक दुकान को आग लग जाती हैं। और उस आग में डॉक्टर की आँखे चल जाती हैं। डॉ॰ मधुसूदन को नेत्रहीन देखकर पद्मा फूट-फूट कर रोने लगती हैं। डॉक्टर को सहाय्यता करने के लिए वह अपना हाथ बढाती हैं। डॉ॰ मधुसूदन के प्रति स्पर्धा करने वाले डॉ॰ वर्मा भी अपनी इर्षा को भूलकर मधुसूदन की सहायता करता हैं। कुछ दिनों के बाद वह मधुसूदन को अपने घर ले आती हैं, और मन लगाकर उसकी सेवा करने लगती हैं। लेकिन मधुसूदन बार-बार सुशिला को याद करता हैं। यह देख उसे लगता हैं कि, अभी भी डॉ॰ मधुसूदन सुशिला को नहीं भूले हैं। तो वह एक योजना बनाती हैं और इस दुर्घटना का समाचार सुशिला को पत्र लिखकर बता देती हैं। सुशिला पद्मा का पत्र पाते ही "डोरा"छद्म नाम से मधुसूदन की सेवा करने के लिए बंबई छोडकर उसके पास आ जाती हैं। उन दोनों को मिलाने के बाद पद्मा मेरठ में जाकर नौकरी करने लगती हैं। माँ के आग्रह पर भी वह विवाह नहीं करती लेकिन अपने बहन का ब्याह कर देती हैं। दोनों भाईयों को नौकरीयाँ लग जाती हैं। माँ का स्वर्गवास हो जाता है। कुछ सालों के बाद पद्मा तपेदिक की शिकार होती हैं, तो उसे जीवन के अंतीम समय में मधुसूदन को मिलने की इच्छा होती हैं। तब वह मधुसूदन और सुशिला जहाँ लोकसेवा करते हुए जीवन बीता रहे थे वहाँ आ जाती हैं। वहाँ उसका स्नेहार्कित स्वागत होता हैं। उस सुखी दम्पतिं को देखकर उसे चरम संतोष प्राप्त होता हैं। वह श्रध्दा और आदर से मधुसूदन का चरण स्पर्श करती हैं। मधुसूदन स्नेहपुर्वक उसका हाथ अपने हाथ में लेता हैं तब उसके शरीर पर रोंगटे खडे हो जाते हैं। संध्या के समय जब सुशिला तानपूरे पर मीराँ का भजन गाने लगती हैं तब मधुसूदन ध्यान से सुनने लगता हैं, यह देख पद्मा को लगता हैं कि, सुशिला अपने आराध्य-देवता पति-परमेश्वर के चरणोंपर अर्ध्य चढा रही हैं। इस पुनित दृष्य को देखकर अपने आप

उसका मस्तक भी झुक जाता हैं। उसे लगता हैं कि, - इसी मिठी दामन के निचे शिघ्र से शिघ्र आँखे सदा के लिए मुरजाए जाय। पद्मा का यह सारा व्यवहार देखकर ऐसा लगता हैं कि, सचमुच पद्मा का चरित्र "निशागीत" उपन्यास के उदात्त प्रेम को अपने रंग में दिप्त कर देता हैं।

(3) " मृगजल " की " मरियम "

शोवडे लिखित "मृगजल" उपन्यास की २१ साल की नायिका "मरियम" एक अनाथ ईसाई लडकी हैं। वर्ण गोरा, विशाल आँखे, लंबा चेहरा, नाक लंबी, होंठ पतले, भोली-भाली अल्लड और भाउक युवती हैं। इसीकारण उसका व्यक्तित्व भी लुभावना लगता था। उसने अंग्रेजी फैशन से बाल कटवा लिये थे। हिंदुस्थानी भाषा के बीच-बीच अंग्रेजी शब्दोंका भी प्रयोग करती हैं। वन्य जीवन के कारण उसके स्वभाव में खुलापन हैं। उसकी वाणी में सुरीलापन और नम्रता हैं। वह न स्कूल जाती हैं न कालेज, बल्कि वह अपने जीवन में आनेवाले अनुभवोंसे ही शिक्षा प्राप्त करती हैं। मिस टॉमस उसे दस बारह साल पहले अपने घर ले आती हैं और उसकी ठीक तरह से देखभाल करती हैं, इसलिए जब टॉमस बीमार पडती हैं तब वह उनके खाने-पीने का, कपडों का, तथा दवा दारू का ख्याल रखती हैं। एक दिन चित्रकार अशोक ठाकूर जब अपनी चित्रकारीता के सिल-सिले में पाद्रीपूर आ पहुँचता हैं तो उसकी मुलाकात मरियम से होती हैं। मरियम जब आर्टिस्ट अशोक के संपर्क में आती हैं और अशोक द्वारा बनाया गया मायाविनीका चित्र देखती हैं तो उसके मनमें तरह-तरह के भाव उभर आते हैं। अशोक इन भावों को देखकर उस चित्र के प्रति उसकी राय पुछता हैं तो वह क्षमा माँगकर स्पष्ट रूपसे अपना मन प्रकट करती हैं, " तो लो बतलाती हूँ। मेरे दिलपर इस चित्र का असर अच्छा नहीं पडा। ऐसा लगा कि यह चित्र एक निर्लज्ज, विलासिनी का हैं और इसके अवलोकन से विषय वासना और कामुकता के भाव जागृत होते हैं। इसको देखने से हृदय पर जो भाव अंकित होते हैं वे

वे हमें उपर उठानेवाले नहीं, निचे गिराने वाले होते हैं।"[1] उसकी राय को सुनकर अशोक वह चित्र फाड डालता है, लेकिन फाडते समय उसके अंगुठे को थोडी जखम हो जाती हैं तो मरियम अत्यंत तन्मयतासे उसकी सेवा करती हैं यह देख उसे लगता हैं कि वह किसी भयंकर दुर्घटनासे बच निकला हैं। पाद्रीपूर गाँव में कोई भी बीमार होता तो उसके मदद के लिए तैयार हो जाती थी। उसे जात-पात का कोई भेदभाव नहीं था। उसकी स्तुति करते हुए जोसेफ काका कहते हैं - "गजब की लडकी हैं, अब्दूल्ला भाई, गजब की। दिल की पक्की और अपनी जान की जरा भी परवाह न करनेवाली। यह है इसलिए पाद्रीपूर में रौनक हैं नहीं तो ---। वह देखों उसके पीछे बच्चे कैसे दौडे जा रहे हैं। "[2] उसकी आँखोंमें सेवा आत्मियता, प्रेम, करुणा और सहानुभूति के भावों का मधुर मिश्रण प्रतिबिंबित था।

बचपन से ही माँ-बाप के प्यार से वंचित रहनेवाली मरियम के सामने अशोक जैसे सुंदर रसिक कलाकार आता हैं, तब वह अपने आपको रोक नहीं सकती और उसके प्यार की दिवानी हो जाती हैं। अशोक भी मरियम की ओर आकर्षित होता हैं। वे दोनों अकेले जाते हैं तब मरियम एक स्थान पर गिर पडती हैं, तो अशोक उसका हाथ पकडकर आगे चलने लगता हैं। तब उसके मनमें ये विचार आते हैं कि, "यह हाथ उसके जीवन के अंत तक उसे सहारा देता रहे तो कैसा अच्छा हो।"[3] इस तरह मरियम मन और हृदय से अशोक को चाहने लगती हैं। वह ना कुछ माँगती है, ना कुछ चाहती हैं, केवल देनेमें ही उसे सुख मिलता रहता है। उसका

१] अनंत गोपाल शेवडे "मृगजल" पृ. १०१

२] अनंत गोपाल शेवडे "मृगजल" पृ. ९७

३] अनंत गोपाल शेवडे "मृगजल" पृ. १०९

यह स्वभाव देखकर अशोक उसके प्रति आकर्षित होता हैं, और एक दिन दोनों का मिलन हो जाता हैं। कुछ दिनों बाद उसे पता चलता हैं कि वह माँ बननेवाली हैं। जब यह बात लोगोंमें फैल जाती हैं तब लोग उसकी नफरत करने लगते है। उसे गाँव से निकाला भी जाता हैं। अशोक भी उसे छोडकर चला जाता हैं। फिर भी वह अपने बच्चे के खातिर जिन्दा रहना चाहती हैं। इसके बारे में संपा. बाकि बिहारी भटनागरजीने अपने "शेवडे - व्यक्तित्व, विचार और कृति" इस पुस्तक में दोनों के संबंध. के बारे में लिखा हैं - अशोक अधपि मरियम से गांधर्व विवाह करता हैं, दुष्यंत के समान ही उससे छल करता हैं तो भी मरियम साध्वी शाकुंतला के समान अनन्य भाव से उसी को हृदय में संजोये रहती है।"[1] पर अशोक को दोष नहीं देती। कुछ दिनों बाद वह एक बच्चे को जन्म देती है।

अशोक मरियम को छोडकर लोनावला चला जाता हैं, वहाँ उसकी भेंट न्यायाधिश की बेटी अरुणा से होती हैं। उसके साथ वह विवाह कर देता हैं। यह खबर सुनकर वह बीमार पडती हैं। उसका बच्चा भी इसी समय बीमार पडता हैं। अपने बच्चे को बीमार देखकर वह व्याकुल हो उठती हैं और भगवान से कहती हैं कि, " ए मेरे मसीह। यह कैसा क्रूर खेल हैं, कि तूने मुझे और मेरे बच्चे को एक साथ ही बीमार किया ? तुझे मालूम है कि मुझे अपने शरीर से जरा भी मोह नहीं हैं, जिस दिन अपने दामन में बुलायेगा उस दिन आने के लिए तैयार हूँ। पर क्या इस मासूम बच्चे को देखकर तुझे दया नहीं आती।"[2]

वह जीना नहीं चाहती लेकिन अपने बच्चे के खातिर उसमें जीने की दुर्दम्य इच्छा होती हैं। इसी बीच वह एक दिन अखबार में अशोक के ऑपरेशन की खबर पढती है तब अपनी बुरी अवस्थामें भी अशोक के पास

१] संपा. डॉ. के बिहारी भटनागर "शेवडे व्यक्तित्व, विचार और कृति" पृ. ६४
२] अ. गो. शेवडे "मृगजल" पृ. २५१

चली जाती हैं। अरुणा भी उसे छोडकर चली जाती हैं। अशोक को अपने किये पर पछतावा होता हैं। मरियम से वह क्षमा माँगकर "मृगजल" के पीछे दौडने की अपनी गलती कबूल करता हैं। वह मरियम को और उसके बच्चे को स्वीकार लेता हैं। अपने बच्चे को सुरक्षितता मिलते देखकर वह अशोक की गोद में अपनी अंतिम साँस लेती हैं। मरियम ईसाई धर्म की होते हुए भी धर्मांध नहीं थी।

इसतरह प्रस्तुत उपन्यासमें शेवडेजीने मरियम के चरित्रव्दारा भारतीय स्त्री की मातृत्व भावना, प्रेम की निष्ठा, आदि गुणों का चित्रण किया हैं।

२) "मृगजल" की "मायादेवी"-

शेवडे लिखित "मृगजल" उपन्यास की स्त्री पात्रों में "मायादेवी" एक प्रमुख स्त्री पात्र हैं। वह बाल विधवा हैं। एक दिन वह चित्रकार अशोक ठाकूर के संध्यारानी, दीवानी, प्रणयीयुगल, स्वतंत्रता के यात्री जैसे चित्रों को देखकर अशोक पर आसक्त होकर उसे अपनी अमीरी के बल पर दास बनाना चाहती हैं। लेकिन चित्रकार अशोक मायादेवी के इस प्रस्ताव को ठुकरा देता हैं। इससे उसका अपमान हो जाता हैं। वह समाज के प्रति विद्रोह प्रकट करते हुए अशोक से कहती हैं कि, "मेरे बारे में जो लोकोपवाद हैं, वे सर्वथा झूठ नहीं हैं, परंतु क्या मेरी उस वृत्ति के पीछे जो मनोदशा हैं उसे आप समझ सकेंगे ? मैं प्रारंभ में बुरी नहीं थी, किंतु परिस्थितियोने मुझे बुरा बनाया, इन परिस्थितियों के कारण मैं समाज से बदला लेना चाहती हूँ।"[१] इस तरह उसकी विद्रोह वृत्ति जाग उठती हैं।

१] अ॰गो॰ शेवडे "मृगजल" पृ॰ ९२॰

वह अशोक से किया गया अपमान का बदला लेना चाहती है। अशोक जब मायादेवी को ठुकराकर पाद्रीपुर में मरियम की ओर आकर्षित होता है तो उसके मन में प्रति शोध की भावना जागृत हो उठती है और एक दिन वह अपना पोर्ट्रेट निकाल ने के लिए अशोक को अपने बंगले पर बुलाती है। तब वह अशोक की भावनाओं को उद्दीप्त करेने के लिए रेशम का चमकिला गाउन पहनती है। अशोक जब उसे गाउन उतारने के लिए कहता है, तब वह गाउन उतारकर उसके सामने "अर्धनग्न अवस्था में खड़ी रहती है। उसके बाल खुले हुए थे, वक्ष:स्थल और उरो भाग भी विवस्त्र था।"[1] फिर भी अशोक विचलीत नहीं होता। इससे मायादेवी का आन्तरिक दाह कम होने की अपेक्षा अधिक प्रज्वलित हो जाता है। और वह अशोक का बदला लेने के लिए अधिक प्रवृत्त होती है। बाद में वह अरुणा को अपने वश में करके अशोक को धमकाती हुई कहती है - "मैं कैसी भूल सकती हूँ ? मेरे प्रणाय का तिरस्कार कर मरियम के बाहुपाशों में कुद पडने में आपको संकोच नहीं हुआ ? और अब इस मरियम को लात मारकर इस अरुणा के पीछे पडे है। अरुणा से कोई अधिक सुंदर स्त्री मिल जाए तो फिर अरुणा को छोडकर उसके पीछे भागेंगे। इसका क्या अर्थ है ? "[2] इतना कहकर वह अशोक का हाथ पकडती है और साडी का आंचल नीचे छोड देती है और ब्लाऊज का बटन खोलकर वह अशोक के पुरुषत्व को चुनौती देती है। तब भी अशोक विचलीत नहीं होता और इस चुनौती को, सेक्स की अपील को वह नहीं मानता बल्कि उसकी दिल्लगी उडाता है। तब मायादेवी को अपने शरीर से तथा जीवन से पहली बार घृणा उत्पन्न होती है और वह अशोक के सामने हार कबूल करती हुई कहती है - " मैं कमजोर हूँ मुझे माफ कीजिये।" बाद में वह अशोक के सामने अपना मस्तक झुकाकर अशोक को भाई मान लेती है।

१] अ॰गो॰शेवडे "मृगजल" , पृ॰८४

२] अ॰गो॰शेवडे "मृगजल" , पृ॰२१४

इस प्रकार एक भोगवादी, प्रेमी, नारी बहन के रूप में बदल जाती हैं।

यहाँ शेवडे ने फ्रायडीय लिबिडो [कामवासना] की वृत्ति पर कलाकार की विजय बतायी हैं। स्त्री और पुरुष मानो अग्नि और मोम हैं। अग्नि के पास आते ही मोम को पिघलना ही चाहिए। इस फिलासफी को बदल दिया हैं और हिंसात्मक माया को अहिंसात्मक बनाया गया हैं।

(५) "पूर्णिमा की "पूर्णिमा" -

शेवडेजी लिखित "पूर्णिमा" उपन्यास की नायिका "पूर्णिमा एक महत्वपूर्ण स्त्री पात्र हैं। वह बॅरिस्टर जीवनचन्द्र पण्डित की एक मात्र बेटी हैं, जिसे सिर्फ हँसना, खेलना मालूम था। उसे नाराज होते कभी किसीने देखा नहीं था। जब पूर्णिमा कालेज में प्रवेश करती है तो उसके उपर अनेक छात्र आकर्षित होते हैं। उनमें उसकी मुलाकात दो छात्रों से होती हैं। एक हैं, विलासबाबू, जो धनवान हैं, विलासी हैं, नारी-जाति की ओर वह हमेशा भोगवादी दृष्टिसे देखता था। दूसरा हैं, विनयकुमार जो धैर्यवान, स्वावलंबी था। नारी-जाति की सेवा करना वह अपना कर्तव्य मानता था। पूर्णिमा को संगीत में रुचि थी, बॅडमिंटन, टेनिस जैसे खेल भी खेलती थी। वह अत्यंत सुंदर थी और उसे अपने सौंदर्य पर अभिमान था। वह इस भिन्न प्रवृत्तिवाले दो युवकों की -ओर भिन्न - भिन्न दृष्टिसे आकृष्ट होती हैं लेकिन अन्तमें पुरुषार्थ तथा सुखोपभोग वृत्ति के कारण वह विलास की ओर आकर्षित होती हैं। जब विनयकुमार विलास बाबू की वृत्ति तथा उसके स्वभाव के बारे में उसको सावधान करता हैं तो वह क्रोधीत होती हुयी उसे फटकारती हैं

कि, "प्रत्येक मनुष्य अपना-अपना दिल तो समझता ही हैं विनयबाबू! लोगों को व्यर्थ ही दूसरों का बोझ उठाकर अपनी जिम्मेदारीयों को बढा लेने की जरूरत नहीं हैं।"[1] इस अपमानसे विनयकुमार पूर्णिमा से अलग होता हैं। लेकिन उसपर इतना जबर्दस्त आघात होता हैं कि, वह बीमार पडता हैं।

पूर्णिमा भी अपने अति अहं के कारण विलास जैसे युवक के साथ अपना मेल-जोल बढाती हैं। विलासबाबू भी उसे कुछ आमिष दिखाकर अपने रंग में पूरी तरह रंगवा देता हैं। एक दिन दोनों का अवैध संबंध हो जाता हैं। इसका परिणाम पूर्णिमा को विवाह के पूर्व मातृत्व आता हैं। जब विलास उससे विवाह से इन्कार कर देता हैं तब वह मातृत्व का शाप लेकर बेचैन हो जाती हैं। विवाह पुर्व मातृत्व सामाजीक दृष्टिसे पाप हैं अत: लोग उसे पापी कहने लगते हैं। उसके पिता डॅ. पंडितजी भी बहुत दु:खी होते हैं तब विनयकुमार पूर्णिमा और उसके पिता को धीरज देते हुए कहता हैं कि, "दुनिया में और सब लोग तुमसे घृणा करें, किन्तू मैं तुम्हें पूरी तरह जानता समझता हूँ और तुम्हारे प्रति मेरे हृदय में सदैव सहानुभूति रहेगी।"[2] पाप और पुण्य के बारे में वह कहता हैं - "पाप और पुण्य के क्या मुल्य हैं "पूर्णिमा" तुम्हारे हाथ से मोहवश एक गलती हो गयी तो कौनसा तुफान आ गया या आसमान फट गया।"[3] और वह स्वयं व्यंकटनगर के पास आगस्टीन हॉस्पिटल में पूर्णिमा को दाखिल करवा देता है। खुद उसकी देखभाल भी करता हैं। वहाँ पूर्णिमा

१] अनंत गो. शोवडे "पूर्णिमा" पृ. ८४
२] अनंत गो. शोवडे "पूर्णिमा" पृ. १४१
३] अनंत गो. शोवडे "पूर्णिमा" पृ. १४१

एक बेबीको जन्म देती हैं तब विनयकुमार से वह कहती हैं, "मुझे लगा कि आज का दिन कितना अच्छा होता यदि इस बेबी के पिता आप होते।" विनयकुमार पूर्णिमा की इस इच्छा को स्वीकार करते हुए कहता हैं - "तो अभी क्या हुआ पूर्णिमा। यह बेबी मेरी ही हैं - मैं इसे हृदय से स्वीकार करता हूँ।"[1] यह सुनकर पूर्णिमा आनंद विभोर होती हैं और उसका मातृत्व बोल उठता हैं।

इसप्रकार शेवडे ने एक पश्चाताप दग्ध तरुण नारीका हृदय-परिवर्तन करते हुये उसे सच्चा रास्ता बता दिया हैं। तो विनयकुमार की सज्जनता ने उसे व्यभिचार और जीव-हत्या के पाप से बचा लेता हैं तथा अनाथ बालकों की समस्या का एक नया सुझाव पेश करता हैं।

(६) "ज्वालामुखी" की "विजया" -

शेवडे लिखित "ज्वालामुखी" उपन्यास की नायिका "विजया" हैं। यह एक न्यायाधिश की बेटी हैं। उपन्यास का नायक अभय कुमार पी.एच.डी. करनेवाला एक छात्र हैं। उसके गुणोंपर प्रभावित होकर विजया उससे शादी करती हैं। उनके विवाह के कुछ ही दिनों बाद सन् उन्नीसौ बयालीस का "भारत छोडो" आन्दोलन छीड जाता हैं। उसमें अभयकुमार राष्ट्र प्रेमी होने के कारण सम्मीलित हो जाता हैं। विजया नवविवाहीता होते हुए भी अपने पति के रास्ते का रोडा नहीं बनती, क्योंकि वह एक सुशिक्षित नारी थी और राष्ट्रप्रेमी थी। इसलिए वह मानती थी कि, नारी बंधन का नहीं, मुक्तिका प्रतीक हैं, कमजोरी का नहीं, शक्ति का प्रतीक हैं। लेकिन जब विजया और अभय "देवगृह" में जाकर निरांजन

१] अ.गो.शेवडे, "पूर्णिमा" पृ. १५६.

तथा कर्पूर लगाते हैं तो धर्म भीरु विजया निरांजन बुझने के कारण अपशकुन मानकर भावी अनिष्ट की कल्पना करती हैं, तो अभय कहता हैं। – " इस अपशकुन में नई बात ही कौनसी हैं ? आज तो सारे विश्वमें अपशकुन की विभीषिका धधक उठी हैं। सारा संसार युध्द की विकराल ज्वालाओं से ग्रस्त हैं।"[1] इसके बाद अभय स्वतंत्रता संग्राम में सम्मीलित होता हैं।

कुछ दिनों बाद गांधीजी के आदेश को मानकर घुघरी ग्राम में लोग रक्तमय क्रांति का आवाज उठाते हैं। उस समय वहाँ की जनता इन्स्पेक्टर बाबूराम और मुन्शी अन्नुखा को जिन्दा जला देते हैं। इसका मुल कारण अभय को मानकर अंग्रेज सरकार उसे गिरफ्तार करने का आर्डर निकालते हैं। कुछ ही दिनों बाद वह घर के पास ही पकडा जाता हैं। उस पर घुघरी हत्याकांड का जुर्म लगाकर उसे फांसी की शिक्षा फर्माते हैं।

अभय को फांसी देने के बाद उसकी शव यात्रा में विजया भी सम्मीलित होती हैं। शव यात्रा के समय का वातावरण हृदय भेदक हो जाता हैं। पुलिस घबरायी जाती हैं, और यात्रा समाप्त करने के लिए प्रयत्न करने लगती हैं। तो जनता और पुलिस में संघर्ष होता हैं। इस संघर्ष में विजया बुरीतरह घायल होती हैं और वह भी प्राण त्याग देती हैं। दोनों को एक ही चिता में जलाते हैं। इसे देखकर कुछ स्त्रियाँ आपस में बोलने लगती हैं कि। – " बडी पुण्यवती हैं विजयारानी सचमुच सती-सावित्री का अवतार हैं। हमारे बडे भाग्य जो उसके दर्शन हो गये।"[2]

इस तरह उपन्यासकार ने विजया के माध्यम से एक आदर्श नारी को प्रस्तुत करने का प्रयास किया हैं।

---

1) अ. गो. शेवडे, "ज्वालामुखी" पृष्ठ 22

2) वही — वही — पृष्ठ 159

(७) "मंगला" की नायिका "मंगला" -

अनंत गोपाल शेवडे लिखित "मंगला" उपन्यास की नायिका तेईस साल की "मंगला" एक गरिब घर की खुबसुरत लडकी है। वह गाँव के मिडिल स्कूल के प्रधानाध्यापक आचार्य शंकर देव शास्त्री की इकलौती बेटी है। बचपन से ही उसकी अनेक आशाएँ, इच्छाएँ उसे जबर्दस्ती दबाने पडी थी। न उसने अच्छा खाया था, न पिया था, न पहना था। जब वह बारह साल की हुयी तबसे उसके पिता कन्यादान का स्वप्न देखने लगे। परंतु उसकी जन्म पत्रिका में मंगल ग्रह थोडा टेढा होने के कारण उसकी शादी नहीं हो रही थी। जिसके कारण उसके माता-पिता परेशान हो गये थे। समाज के स्त्रीयों के ताने भी सुनने पडते थे। घर-घर में उसके दुर्भाग्य की चर्चा होती थी, जिससे मंगला तंग आकर एक दो बार आत्महत्या करने की कोशिश भी की थी। लेकिन आत्महत्या करना कायरता है, यह उसने एकाध किताब में पढा भी था। जिसके कारण वह कुएँ के पास जाने पर भी अपनी जान न दे सकी।

शादी न जम जाने के कारण वह एक बार अपने पिताजी से कहती है कि, "आप मुझे किसी गधे के गले से भी बाँध दे तो मैं शादी के लिए तैयार हूँ।"[१] तब उसके पिता अपने मित्र ज्योतिषाचार्य वेदव्रत शर्मा के पास जाते हैं और कुंडली दिखाकर विवाह का कोई उपाय बताने के लिए कहते हैं। तब ज्योतिषाचार्य बताते हैं कि, "उसका विवाह किसी अंधे या अपंग पुरूष से किया जाय तो दुष्ट ग्रहों का परिमार्जन हो जायेगा।"[२] इसी कारण उसके पिता वह सुंदर होते हुए भी उसकी शादी एक अन्धे संगीत तज्ञ पंडीत सदानंद से करा देते हैं। उसके भावी पती के बारे में

१] अ.गो.शेवडे "मंगला" , पृ. २४

२] अ.गो.शेवडे "मंगला", पृ. १५.

उपन्यासकार कहते हैं कि, "उसका पति अंधा नहीं एक पुरा-पुरा आदमी है, जिसके पास आँखों को छोडकर और किसी बात का अभाव नहीं।"[1]

शादी के बाद वह अपने पति के साथ रहने लगती है। अमीर लडकियों की तरह अच्छे कपडे पहनकर फैशन करना, सिनेमा नाटक देखना, होटल जाना, शहर की सारी खुशियों को लुटने के लिए उसका मन मचलने लगता है लेकिन यह चिजें उसे नहीं मिल पाती। उसके हृदय में अपने पति के प्रति दया है, सहानुभूति है, करुणा है पर प्रेम नहीं, इसका कारण उसका सौंदर्य और जवानी की उसके प्रति व्दारा प्रशंसा नहीं हो पाती। वह अन्धा होने के कारण उसकी उपेक्षा होती थी। जिसके कारण वह बार-बार बेचैन हो जाती थी। एक दिन उसके मन में सिनेमा देखने की इच्छा होती है। जब यह बात पति को बताती है तो वह उसे इजाजत देता है परंतु कोई साथ न होने के कारण जा नहीं पाती। अन्य लडकों के साथ जाना उसे पसंद नहीं था और पति के साथ जाना उसे एक प्रकार की लज्जा आती थी। एक बार शहर में उदय शंकर की नृत्य कंपनी आ जाती है तब उसे नृत्य देखने की भी इच्छा होती है। परंतु वहाँ भी वह नहीं जा सकती। इन इच्छाओं की पूर्ति न होने के कारण धीरे-धीरे उसके मन में बेचैनी बढती जाती है और अपने पती के प्रति नफरत के भाव निर्माण हो उठते है। इसी बीच चन्द्रकांत नाम का एक ऊँचा पूरा तगडा युवक सदानंद के पास संगीत सिखने के लिए आया करता था। धीरे-धीरे मंगला उसके प्रति आकर्षित हो जाती है। एक दिन सदानंद की ओर से उदय-शंकर का नृत्य देखने के लिए चन्द्रकांत के साथ

1] अनंत गो. शेवडे "मंगला" पृ. २४.

जबलपूर जाने की इजाजत मिलती है। जिस तरह वह चंद्रकांत की ओर आकर्षित थी उसी तरह चंद्रकांत भी उसीकी ओर आकर्षित था। लेकिन उन दोनों को अपना प्रेम प्रकट करने का मौका नहीं मिला था। जब जबलपुर जाने के लिए अनुमती मिलती है तो वे दोनों खुशीखुशी राजी होते हैं और जबलपुर चले जाते हैं। यहाँ उन दोनों का प्रेम आकर्षण, प्रेम और प्रणय का रूप धारण करता है। मंगला चंद्रकांत से यौवन सुलभ आनंद पाकर बहुत खुश होती है और एक दिन उसीके साथ बंबई भाग जाती है। वहाँ कुछ दिनों तक वे दोनों सुख से रहते हैं। समय के साथ मंगला का बंबई के आमोदभरे विलासपुर्ण जीवन का प्रथम आवेग कम होता जाता है। और उन्माद का नशा भी उतर जाता है। चंद्रकांत को खदानोंपर काम के लिए जाना पडता था। कोर्ट-कचहरी भी करना पडता था, एक्सपोर्ट के सिलसिले में दिल्ली जाना पडता था और भी दौरे करने पडते थे। इसलिए उसे महिने में पंद्रह दिन बंबई से बाहर रहना पडता था। मंगला के आराम के लिए उसने पुरा-पुरा इन्तजाम कर रखा था। पर ज्यों ही वह बाहर चला जाता तो वह अकेलापन महसूस करने लगती थी और उब उठती है। एक-बार जब चंद्रकांत दिल्लीसे वापिस आता है तो उसे तानपुरा लाने के लिए कहती है। ताकि वह वक्त काटने के लिए गाना सिखने की इच्छा प्रकट करती है। उसी दिन चंद्रकांत उसे तानपुरा ला देता है। धीरे-धीरे वह अपने कक्ष को संगीत शाला का रूप दे देती है। पहले-पहले तो मंगला का यह संगीत प्रेम चंद्रकांत की अनुपस्थिती में होता था लेकिन आगेचलकर वह चंद्रकांत के रहते हुये भी तानपुरा लेकर बैठती थी। उसका यह परिवर्तन चंद्रकांत को अच्छा नहीं लगता वह क्रोधीत होकर कहता है, "चलो भी मंगला। कितनी देर हो गई ? तुम्हें तो तैयार होने भी एक घंटा लगेगा।"[१] लेकिन मंगला अब तैयार होने में एक घंटा नहीं

१] अ॰गो॰शेवडे, "मंगला" , पृ॰ १२८

लगा देती वह बाथरूम में जाकर मुँह पर एक हलका-सा हाथ फेर लेती, और बालों में जल्दी-जल्दी कंघी फेर कर सँवारती । उसे सजने संवरने में अब कोई दिलचस्पी नहीं रही थी । वह सिर्फ संगीतमें ही गुम हो जाती थी । इसी तरह साल - डेढ साल का समय बित जाता है तब चंद्रकांत उसके साथ विवाह करने की इच्छा से वकीलों से बातचीत शुरू कर देता है । तभी अचानक एक दिन उसे तार मिलती है कि, "उसकी खदानपर पहाड काटते समय दुर्घटना हो जाने के कारण ग्यारह मजदूर दबकर मर गये । इसलिए उसे तुरंत खदानपर जाना पडता है । इससे उसका मन और भी दु:खी होता है और वह भाव विभोर होकर गाने लगती है ।

एक दिन मंगला बंबई के दैनिक पत्र में पं. सदानंद के शास्त्रीय संगीत कार्यक्रम का समाचार पढती है और टिकट निकालकर संगीत सभा में शरीक होती है । अपने पती की संगीत साधनासे प्रभावित जनसमुदाय को देखकर मंगला को अपने किये पर पछतावा हो जाता है । उसकी आँखों से पानी बहने लगते हैं । वह कहती है - "आओ बरसों मेरे नयन घन । खूब बरसो । मेरे जीवन में तुम इतनी बडी बाढ ला दो ताकि मेरा सारा पाप और कलंक धुल सके तो धुल जाय । मैं तुम्हारा उपकार कभी नही भूलूंगी ।"[1] और वह अपने शयन कक्ष में जाकर फुट-फुट कर रोने लगती है । वह चंद्रकांत के भोगविलास से बाहर निकलने के लिए बेचैन हो जाती है । सदानंद के बारे में उसके मन में दबी हुयी श्रध्दा-भावना फिर से जाग उठती है, और उसका हृदय परिवर्तन हो जाता है । अपनी पश्चाताप की भावना वह एक पत्र व्दारा मृणाल के सामने व्यक्त करती है, वह लिखती है -

"प्रिय मृणालिनी दीदी,

तुम्हे मेरा अकस्मात आया हुआ पत्र देखकर आश्चर्य होगा

1] अ. गो. शेवडे, "मंगला", पृ. 131

पर दुनिया में तुम्हें छोडकर ऐसा कोई व्यक्ति मेरा नहीं कि, जिसे मैं इस प्रकार का पत्र लिख सकूँ। तुम उसपर ध्यान दे सके तो इस अभागिनी पर अनंत उपकार करोगी।"

अचानक कल रात को मैंने अनुभव किया कि, "मेरे पति का व्यक्तित्व मेरे रोम-रोम में व्याप्त है, मैं उनसे कितनी भी दूर क्यों न भाग जाउँ। मैं उन्हें कदापी नहीं छोड सकती।"

क्या तुम मुझे उनके चरणों के पास जगह दिला सकोगी, बहन ? मैं तुम्हारा उपकार आजन्म नहीं भूलूंगी। मेरा उध्दार अब तुम छोडकर और कोई नहीं कर सकता। इस जीवन और मरण के व्दंव्द का फैसला क्या हो यह तो तुम्हारा पत्र हो बता सकेगा।

तुम्हारी हतभागिनी
मंगला"[१]

इस पत्र को मृणालिनी व्दारा सदानंद सुनता है और मंगला को क्षमा कर देता है। इस तरह मंगला फिर सदानंद के पास आती है और अपने पाप का प्रायश्चित लेने के लिए सादगी से जीवन बीताना शुरू करती है। अपने सादगी पुर्ण और सौहार्द स्नेह से वह पंडीत सदानंद के दिल में फिर अपना स्थान बना लेती है। इस तरह बिछडे हुए मंगला और सदानंद का फिर से मिलाप हो जाता है। मंगला के हृदय-परिवर्तन से फिर घर की स्थापना हो जाती है।

१] अ.गो.शेवडे - "मंगला", पृ.१४० से १४४.

मंगला का यह जीवन पट उसे पूर्ण नारी की संज्ञा देता है। नारी सुलभ चंचलता उसके मन में हैं। जवानी के ज्वार में हर युवा स्त्री पुरुष पर नशा होती हैं। प्रौढत्व धारण करने पर जब यह नशा दूर होती है तो उन्हें अपने किये पर पछतावा होता है। मंगला का चरित्र विकास इसी क्रम में हुआ है। मंगला का चरित्र एक बहुमुखी नारी का चित्रण है। अपनी गलतीयों को स्वीकार करने की उदारता उसमें है। उत्तर-जीवन में "भगवद्‌ - गीता" उसका आदर्श बनता है। और उसका जीवन श्रध्दा, भक्ती और प्रेम से पुलकीत होता है।

(८) "मंगला" की "मृणालिनी" -

अनंत गोपाल शेवडे लिखित "मंगला उपन्यासमें मृणालिनी एक एक महत्वपुर्ण स्त्री पात्र है।

मृणालिनी अपने घरमें कमानेवाली अकेली है। पिताजी चल बसे है, घरमें माँ, तीन बहने, तथा दो भाई हैं। वह स्थानिय हायस्कूल में अध्यापिका का काम करती है। अत: घरके दायीत्व का बोझ उसके कधोंपर असमय पडने के कारण पच्चीस की उम्र में वह युवती की अपेक्षा प्रौढ लगती है। वह विवाह करना चाहती थी पर उसका प्रियतम अबीसीनियाकी लढाई में मारा जाता है। दिन भर नौकरी, श्याम को टयुशन, सुबह होमवर्क और बाकी बचा हुआ सारा समय घर की देखभाल के लिए देती थी।

मृणालिनी, संगीत शिक्षक सदानंद को संगीत में अपना गुरू मानती है। गुरु भक्ति की भावना से सदैव उसे मदद करते हुए संगीत साधना में मग्न हो जाती है। उसके संगीत सिखने के पीछे दो कारण थे, एक भावात्मक और दूसरा व्यावहारीक। उसके स्वर्गीय प्रेमी को संगीत से बहुत प्रेम था। बंबई से जहाज में बैठने से पहले उसने उसे एक

तानपुरा भी भेंट दिया था। वह स्वयं अच्छा गाता था। उसीके संगीत प्रेम के कारण वह भी इस कला की उपासिका बन जाती है। व्यावहारिक दृष्टीकोन यह था कि संगीत में प्रविणता प्राप्त करनेपर वेतन वृध्दी हो जाती क्योंकि उसकी पाठशाला में संगीत के वर्ग भी शुरू होनेवाले थे। इसलिए वह संगीत की प्राथमीक परिक्षा उत्तीर्ण कर अब वह विशारद का अध्ययन करने लगती है।

उसकी बडी इच्छा है कि, पंडीत सदानंद जी को कोई योग्य जीवन संगीनी मिल जाय। उनका विवाह हो जाय तो उनका जीवन सुखी होगा। परंतु अब तक ऐसा संयोग ही नहीं आया था। जब मंगला के पिता सदानंद के बारे में मृणालिनीसे सब कुछ पुछताछ करके जाते हैं तो वह ऐसी प्रफुल्लीत हो जाती है जैसे उस बेचारी की ही शादी होने जा रही है। वह इस आनंद के साथ सदानंद को उसके विवाह की खबर देने जाती है तो उसे विश्वास नहीं होता। वह कहता है, "कोई भी पिता मेरे गले में लडकी बाँधने के बजाय उसे कुएँ में ढकेलना अधिक पसंद करेगा।" तो वह कहती है, मैं गलत नहीं कह रही हूँ, सचमुच लडकी के पिता उसे लेकर आज श्याम को आपसे बातचीत करने आ रहे हैं। लडकी के पिता आचार्य शंकर देव शास्त्री तथा पंडीत सदानंद में बातचित होने के बाद उनके विवाह की तिथी निश्चीत होती है, और बसंत-पंचमी को सदानंद और मंगला का विवाह हो जाता है। विवाह के बाद पंडित सदानंद के हितैषी मित्र चंद्रकांत संगीत सिखने की वजह से बार-बार आता रहता है और उसकी और मंगला की काफी पहचान होकर दोनों परस्पर आकर्षित हो जाते हैं। चंद्रकांत संगीत विद्यालय को पाँच सौ रूपयों का दान दे देता है। चंद्रकांत के इस कृत्य से चालाक और दुरदृष्टी मृणालिनी को भावी संकट का आभास हो जाता है। जब सदानंद मंगला को उदय शंकर का नृत्य देखने को चंद्रकांत के साथ भेजता है तो मृणालिनी अपने

मन की जो प्रतिक्रिया व्यक्त करती है, उसमें उसकी दूरदर्शिता स्पष्ट नजर आती है, वह मन ही मन में कहती है कि, -

"पंडितजी यह आप क्या करने जा रहे हैं ? क्या आपने स्वयं अपने घर को अपने ही घर के चिराग से आग लगाने की ठानी है ?"[१]
और वह सदानंद को कहती है -

"आखीर इतनी तडातडीसे उसे जबलपुर भेजने की क्या जरुरत थी ? नृत्य का एक खेल नहीं देख पायी तो ऐसा कौनसा अनर्थ हो गया ?"[२]
यह कहकर वह अपने मन की दूरदर्शी दृष्टीसे आनेवाले संकट को स्पष्ट करना चाहती है। वह पंडितजीसे यह कहना चाहती थी कि, जबलपुर ही नहीं दुनिया के किसी छोर पर मंगला को भेज, पर चंद्रकांत के साथ नहीं ? वह जानती थी कि, उस प्रश्न से गर्भित अर्थ में जो लांछन छिपा है, वह उनके मानसिक स्वास्थ्य को नष्ट-भ्रष्ट कर देगा। इसलिए उसकी जुबानपर से शब्द नहीं उतर सके।

उसके पास एक जीवन दृष्टी है - उसका कहना है - "जीवन का सच्चा सुख मन की शांती और समाधान पर अवलंबीत रहता है, हाय-हाय में नहीं। मर्यादा और संयम उसके मुख्य आधार स्तंभ है। उनका लंगर छोडकर कोई भी जहाज सुरक्षित नहीं रह सकता। मंगला भाभी को इस तरह खुला छोड देना उचित नहीं है पंडीतजी।"[3]

१] अनंत गोपाल शेवडे "मंगला" पृ. ५५
२] अनंत गोपाल शेवडे "मंगला" पृ. ५६
३] अनंत गोपाल शेवडे "मंगला" पृ. ५७

कहकर वह अपने मन की आशंका को स्पष्ट कर देती है।

जबलपुर से लौटने के बाद चंद्रकांत और मंगला में संबंध बढ जाता है और एक दिन मंगला पंडित सदानंद को पत्र लिखकर चंद्रकांत के साथ बंबई भाग जाती है। उस पत्र को लेकर सदानंद मृणालिनी के पास आता है और घबडाये हुये स्वर में मृणालिनी को कहता है कि, "मंगला चली गयी।" वह मृणालिनी को पत्र दिखाता है। पत्र पढने के बाद मृणालिनी पंडीतजी को स्पष्ट कहती है कि, "क्या आपने चंद्रकांत के साथ मंगला भाभी को जबलपुर भेजने की गलती नहीं की ?" तो सदानंद उसे कहता है, कृत्रिम दिवारों से ऐसी बाते नहीं रोका जा सकती बहन। इसके लिए तो सबसे मजबूत होती है अपने ही मन की दीवारे। वे यदि तुम्हारा साथ नहीं देती है तो निश्चय मानो कि दुनिया की कोई भी शक्ति तुम्हारा साथ नहीं दे सकती। अपना ही मन अपना सबसे बडा मित्र है, वही अपना सबसे बडा शत्रु है। बाह्य उपकरण और वातावरण तो निमित्त मात्र है।"[1]

मंगला के चले जाने के बाद पंडित सदानंद निराश होकर आत्म-हत्या करना चाहता है तब मृणालिनी उन्हें संगीत साधना के लिए प्रेरीत करती है। वह उसके अंतर-आत्मा की चेतनाको जागृत करती है। वह कहती है - "मंगला तो आपके जीवन में पिछले साल ही आयी थी पर आज तक जिस कला ने आपका साथ दिया और जीवन के आघात-प्रत्याघातों को बर्दास्त करने की शक्ति दी वह है संगीत। वही तो यथार्थ में आपके जीवन का बडा सहारा है। एक दिन जरूर ऐसा आयेगा कि सारे भारत वर्ष में आपके शास्त्रीय गायन की दुदुंभी बाज उठेगी।

1] अनंत गोपाल शेवडे "मंगला", पृ. १०१.

इतने बडे मिशान के सामने क्या आप एक नारी के आने या जाने से पराजित होंगे पंडितजी ?"[1]

तो पंडितजी कहते हैं कि - "क्या सचमुच तुम्हे मेरी कला पर इतना विश्वास है ।" तो मृणालिनी कहती है -

"मैं झूठा दिलासा देने के लिए कभी कुछ नहीं कहती । कलाकार के लिए व्यक्तिगत सुख-दु:ख का कुछ महत्व नहीं होता लेकिन उसकी कला साधना ही उसका जीवन है और उससे मुँह मोडना ही उसका मरण है ।"[2] उसका यह कथन, जीवन की ओर देखने की गांभीर्यपुर्ण दृष्टि का परिचय देता है ।

इसी प्रेरणा से सदानंद प्रेरीत होकर अपनी संगीत साधनामें व्यस्त रहे और सचमुच वह आखील भारतीय ख्यातीके शास्त्रीय गायक बन गये ।

संगीत सम्राट बनने पर मंगला के मन में फिर से सदानंद के साथ रहने की इच्छा होती है और इससे सम्बन्धीत पत्र वह मृणालिनी को भेज देती है । मृणालिनी पंडीतजी की सहमती लेकर मंगला को आने के लिए कहती है । मंगला आने के बाद उन दोनों को फिर से मिला देती है ।

सदानंद जब मंगला को राग सिखाने लगते हैं तो अचानक वहाँ मृणालिनी आ जाती है और कहती है "नमस्ते पंडितजी ।" तो पंडीतजी

१] अ.गो.शेवडे, मंगला, पृ. १०३

२] अ.गो.शेवडे, मंगला, पृ. १०३.

कहते हैं – "नमस्ते बहना" आज आज इस समय कैसे आना हुआ ? तो वह कहती है – स्कूल से लौट रही थी तो रास्ते में माली के दुकान के सामने रुक गई। सोचा आपके लिए कुछ उपहार दे दूँ। और वह उपहार के रूप में फूलों की दो मालाएँ उन्हें देती है। – तो पंडितजी उसे कहते हैं – " सचमुच मृणालिनी तुम अद्भुत हो, जहाँ जाती हो वहाँ सुगंध और प्रकाश बिखरती जाती हो, तुम अपने लिए नहीं औरों के लिए जीती हो, भगवान तुम्हारा कल्याण करे बहन।"[1] पंडितजी के इस कथन में मृणालिनी के गुणों का हमें यथार्थ रूप का दर्शन होता है।

मृणालिनी एक समर्पित नारी है। मनुष्य को उसके दोषोंसहीत स्वीकार करने की अनुठी उदारता उसमें है। उसका चरित्र एक ऐसे नारी का चरित्र है, जो दूसरों के सुखमें अपना सुख और संतोष खोजती है। वह भारतीय नारी का आदर्श है। दायित्वबोध, गुरुश्रध्दा, संगीत प्रेम, अन्धे, अपाहिजों के प्रति हमदर्दी मनुष्य के त्रुटियों के प्रति क्षमाभाव, ये गुण उन्हे असाधारण नारी बना देती है। उसका पुरा चरित्र आदर्श गुणों का समुच्चय है। इस उपन्यास में इन सारे गुणों को देखने के बाद ऐसा लगता हैं कि इस उपन्यासमें भलेही वह गौण पात्र के रूपमें रखा गया हो फिर भी वह मुख्य पात्र के रूप में ही हमारे सामने आती है। इसमें थोडा भी संदेह नहीं है।

(e) "अधुरा सपना" की "सुहासिनी" –

शेंवडे लिखित "अधुरा सपना" एक लघु उपन्यास है। इसकी

1] अ.गो.शेंवडे, मंगला, पृ. ५६.

नायिका "सुहासिनी" है। सुहासिनी के पिता ब्रिटीश बॅन्क में मॅनेजर थे। अच्छी आमदनी थी। सुहासिनी उनकी एकलौती एक बेटी थी। बचपन में ही वह अपने माँ के प्यार से वंचित हो गयी थी। इसलिए उनके पिता उसपर कोई जबरदस्ती या कोई रोकटोक नहीं लगाते थे। इसी कारण सुहासिनी में अपने आप निर्णय लेने की तथा एक तरह की स्वयं भावना आ गयी थी, जो उसके "अहंभाव" को उभरती है।

उसका लावण्य अवर्णीय था "कुंदन जैसा रंग, उंची छरहरी देहलता, बडी-बडी काली आँखे और मोतीयों की लडी की तरह दंत पंक्तीया। जब हसती थी तो लगता था कि, "नक्षत्र हंस रहे हैं।"[1] वह अपने सौंदर्य को जानती थी इसलिए हमेशा उसे बनाए रखती थी। अपने कुदरती सौंदर्य को आधुनिक प्रसाधनों से और भी सजाना वह बखूबीसे जानती थी। उसके रहन-सहन का ढंग उच्च स्थर का था।

वह एक बुद्धिमानी लडकी थी। इंटर पास करके थर्ड इयर में पढने के लिए गवर्नमेंट कालिज में जाती है। पढने लिखने की अपेक्षा उसे खेल-कूद, संगीत, अभिनय, सभा सम्मेलनोंसें अधिक रुचि थी। वह टेनिस और बॅडमिंटन भी खेलती थी। कालिज के वाद-विवादों में भी हिस्सा लेती थी। नाटक की नायिका बनकर कालिज का नाटक यशस्वी करती थी। उसे गाने का भी शौक था। उसकी आवाज में भी "एकतरह का कंपन था, जोश था जो दिल की गहराई तक स्पर्श करता है। उसकी आवाज में आर्तता थी, जीसका श्रोताओंपर गहरा असर पडता था।"[2]

१] अनंत गोपाल शेवडे "अधुरा सपना" पृष्ठ १८.

२] अनंत गोपाल शेवडे "अधुरा सपना" पृष्ठ १८, १९.

कालिज के कई लडके उसके प्रेम के लिए दिवाने थे। कालिज की वह "ब्युटी क्वीन" थी। "उसमें जबर्दस्त "सेक्स अपील" का आकर्षण था।"[1]

सहासिनी अपनी शक्ति और प्रभावको जानती थी इसलिए उसे कुछ "अहंकार" भी हुआ था। एक दिन कालिजमें वाद-विवाद की प्रतिस्पर्धा थी और उसमें उसी कालिज का विद्यार्थी गिरीश ने भाग लिया था। गिरीश भी अपनी "बुध्दिमानी" के "अहं" में मस्त था। अत: सुहासिनी के कुछ मुद्दों की वह अपने शिष्ट-विनोद तथा व्यंग चातुरीसे खिल्ली उडा देता है। उससे उसके अहं पर आघात होता है और उसके मन में गिरीश के प्रति घृणा, तिरस्कार तथा प्रतिशोध की भावना जागृत होती है और वह उसका बदला लेने के लिए मार्ग ढूँढती रहती है।

वह एक अभिनय संपन्न लडकी होने के कारण एक दिन कालिज के असम्बली हाल में उसका एक कार्यक्रम रखा था जिसमें तीन स्तर थे। [१] उर्वशी नृत्य [२] मूक अभिनय [३] भजन। उर्वशी नृत्य में उसने अपनी सारी शृंगारीकता उँडेल दी थी। उस नृत्य के लिए उसमें आवश्यक शृंगार, भडकिला, उन्मादक, मोहक ऐसा रूप था, जो उसपर एक उन्मादिनी उर्वशी का रूप दिखाने में सहाय्यक होता था।

मूक अभिनयमें अन्धी भिकारीनी को भी उसने जी जान से पेश किया। अंत में वह मीरा का भजन प्रस्तुत करती है जिससे स्टेजपर प्रत्यक्ष मीरा का आभास उसके रूप होता है। सादगीसे आभूषण-विरहीत मीरा जैसे रूप लेकर वह अपने सुरीले आवाज में भजन पेश करती हैं।

१] अ. गो. शेवडे "अधुरा सपना" पृ. ३५.

"सुहासिनी की आवाज में आर्तता थी, लय थी, एक विचित्र प्रकार का आकर्षन था, जो श्रोताओं के हृदय को तुरंत स्पर्श कर लेता था। आज उसने विरह-वेदना की समस्त करूना और क्रंदन उसमें भर दिया था।"[1] तब गिरीश उसे हार्दिक बदाई देता है। कार्यक्रम के बाद वह सुहासिनी को अपना दिल दे बैठता है। "पर सुहासिनी ? उसकी भावनाओं का क्या हाल था ? क्या वह गिरीश को प्रतिदानमें दे सकी जो उसने उससे पाया था ?"[2] लेखक के इस कथन से सुहासिनी के गुण का पता चलता है।

गिरीश के अभिनंदन से वह प्रसन्न तो होती है, लेकिन उसका अहं तृप्त होने की अपेक्षा अधिक बढ जाता है। उसका जवाब देने के लिए वह बेचैन होती है। अब वह गिरीश को अपने सामने झुका सके ऐसी भयंकर परंतु गुप्त प्रतिस्पर्धा उसके मन में घर कर बैठती है। उसके इस अभिनय के अन्तर्गत बदला लेनेकी गुप्त इच्छा ही कार्यरत दिखाई देती है। गिरीश से प्रशंसा पाकर उसके अहं भाव को और भी पुष्टी मिलती है। अत: सुहासिनी अपने अहं के सामने गिरीश को इस कार्यक्रम के व्दारा जीत लेती है। फिर भी उसके मन में यह एक अहंकार था कि, - "किसी भी पुरूष को वह अपनी मोहीनी की परिधी में बांध सकती है।"[3] इसलिए वह गिरीश को और सताने के लिए फोटोग्राफर रामलाल के साथ अपना मेल-जोल बढाती है, किंतु गिरीश संयमी और स्वाभिमानी होने के कारण अपने आप सुहासिनीसे दूर तो हो जाता है, लेकिन दिल से नहीं। सुहासिनी को रामलाल के व्यक्तित्व में पौरूष के, ताकद का,

---

१] अ॰गो॰शेवडे "अधुरा सपना" पृ॰ २५

२] अ॰गो॰शेवडे "अधुरा सपना" पृ॰ ३०

३] अ॰गो॰शेवडे "अधुरा सपना" पृ॰ २२॰

आभास मिला था, जैसे इस आदमी में जबर्दस्त आत्मविश्वास हो और अपने कदमोंपर पूरा-पूरा भरोसा। इसलिए सुहासिनी को रामलाल के प्रति खिंचाव होता है और वह एकदिन रामलाल से विवाह बध्द हो जाती है। वह गिरीश को बताना चाहती है कि, गिरीश, तुमसे हीन पुरूष से भी प्रेम करके मैं जिन्दा रहँ सकती हूँ, तृप्त बन सकती हूँ। परंतु रामलाल से उसके मन की तृप्ति कभी नहीं हो पाती। वह रामालाल के साथ बंबई में आकर अत्यंत कष्ट में दिन गुजारती है - लेकिन दु:ख की आह उसके मुँह से नहीं निकलती, क्योंकि उसका अहं उसे दबा रहा था। विवाह के उपरान्त सच देखा जाय तो उसे पश्चाताप हो रहा था, परंतु वह व्यक्त नहीं करती, क्योंकि गिरीश के सामने वह अपने को गिराना, सिर झुकाना नहीं चाहती थी। गिरीश भी अपनी आत्म कैंद्रीत वृत्ति छोडकर परदेश में चला जाता है। वहाँ अनेक कष्टों के बावजूद मैक्सिकोमें एक श्रेष्ठ भारतीय व्यक्ति बनता है। फिर भी सुहासिनी की और आकर्षित रहता है। वह उसकी ओर दया तथा सहानुभूतिसे देखता रहता है।

सुहासिनी बंबईमें अत्यंत दीन आवस्थामें पाँच बच्चों का भार संभालते हुए जी रही थी। उसकी दयनियता का, आर्थिकता का एकमात्र सहारा संगीत ही रह जाता है और रेडियोंपर संगीत कार्यक्रम पेश कर कुछ आमदनी करने लगती है। गिरीश के सामने अब भी वह अपने दैयनिय अवस्थाको प्रकट नहीं करती, बल्कि रामलाल के अदम्य इच्छा-शक्ति का सुप्त गुण गौरव ही करती रहती है, और अपने अहं को कायम टिकाती रहती है।

गिरीश परदेशसे लौट आने के बाद अपनी दरिद्री अवस्थामें

भी एकांत पाकर जब उसने फिर से वही मीरा का भजन सुनाया, तो गिरीश की आँखों में आँसू नहीं आए बल्कि, सुहासिनी की आँखों में आँसू आते हैं तब वह गिरीश से कहती है, - "गिरीश। इस भजन को गाते-गाते मैं हरि की मूर्ति का दर्शन करती हूँ, तो उसीके के साथ ही तुम्हारी मूर्ति भी मेरे आँखों के सामने आती है।" इससे स्पष्ट होता है कि, सुहासिनी गिरीश को कभी भूल नहीं सकी। अपने आवेग को संयमित न करके वह कहती है, "नाराज मत हो गिरीश। काश, तुम नारी का हृदय समझ पाते। वह जिसे चाहती है, पर पा नहीं सकती, उसे अगले जनममें पा सके इसके लिए तपस्या करती है।"[१]

इसतरह अपने अहं के कारण अत्यंत स्वाभिमानी सुहासिनी अंत में गिरीश के सामने हार जाती है, और गिरीश भी स्वयं को पश्चाताप के दण्ड के रूप में हृषिकेश से केदारनाथ, बद्रीनाथ और फिर हृषिकेश की परिक्रमा करने लगता है, क्योंकि भगवान इस जनम में न सही पुर्नजन्म में अपनी दाम्भिक इच्छा पूरी करें।

(१०) "इंद्रधनुष" की "वीणा" -

शेवडे लिखित "इंद्रधनुष" उपन्यास की नायिका "वीणा" फिलासॉफर डॉ॰ ज्ञानशंकर की पत्नी है। डॉ॰ ज्ञानशंकर भूमपूर विश्व-विद्यालय में पढाने का काम करते थे, तब वीणा उनकी विद्यार्थिनी थी। वीणा डॉ॰ ज्ञानशंकर की पढाने की शैली और वक्तृत्वपर खुश थी इसलिए वह उनके प्रति आदर की भावना रखती थी। उसकी यह आदर

१] अ॰गो॰शेवडे "अधुरा सपना" पृष्ठ ११६.

की भावना धीरे-धीरे प्रेम का रूप धारण करती है, और वे दोनों विवाह बध्द हो जाते हैं।

विवाह के समय डॉ• ज्ञानशंकर की उम्र पैंतीस सालकी और वीणा की उम्र बीस की थी। फिर भी वीणा के माता-पिता ने कोई एतराज नहीं किया, क्योंकि वह सात बहनोमें एक थी। वीणा को घर में कोई प्यार नहीं मिला था। उसके जन्म के सव्वा साल बाद ही दूसरी बहन पैदा हुयी, फिर तीसरी, फिर चौथी इसलिए उसके हिस्से में माँ-बाप का प्यार प्राप्त नहीं हुआ। अत: प्रोफेसर साहबने उसे जो महत्व दिया, उसे प्रतिष्ठा मिली, इसलिए उसके मन में उनके प्रति कृतज्ञता का भाव पैदा होता है।

कालिज के अध्यापक और छात्रा के विवाह को प्रेम-विवाह के सिवा कोई और संज्ञा नहीं दी जाती। डॉ• ज्ञानशंकर और वीणा के इस विवाह की बात शहर में फैल जाती है। लोग उन्हें सताने लगते हैं कि, "ये लव-मैरेज है, तो ये दोनों कबूल कर लेते हैं।"

वीणा अपने वैवाहीक जीवन में सुखी थी। परंपरागत रूढीग्रस्त विवाह में जो कुछ उपलब्ध हो सकता था, वह सब उसे प्राप्त था। पति की अच्छी नौकरी थी, रहने के लिए क्वार्टर था, घरमें रेडियो, फर्निचर था, दो वक्त स्वादीष्ट भोजन मिलता था, रात को सोने के लिए अच्छा कमरा था, स्वास्थ्य भी ठीक था। कपडे-आभूषणों के लिए कोई रोक-ठोक नहीं थी, फिर भी वह दु:खी थी, क्योंकि, विवाह को पंद्रह साल पुरे हो जाने के बाद भी उसकी कोख अब-तक खाली ही रह गयी थी।

दवाईयाँ खाई, गण्डे तावीज बाँधे, संत-महतोंकी सेवा की, मंत्र-जन्त्र जपे, पर कोई नतीजा नहीं निकला। प्रोफेसर साहब दार्शनिक होने के कारण मानते थे कि, -

"जो भाग्य में नहीं है तो उसके लिए रोने पिटने से क्या फायदा ? दुनिया सब मिथ्या है, माया है, उसमें जादा उलझनेसे कोई लाभ नहीं, संतान होने से मिथ्या जगत सत्य नहीं बना जाता और न होने से भी नहीं होता, फिर इस मोह ममता में पडनाही बेकार है।"[१]

वीणा दार्शनिक की पत्नी थी, पर स्वयं दार्शनिक नहीं थी, उसका सारा मन, शरीर और हृदय मातृत्व के लिए छटपटा रहा था, पर उसकी वह क्षुधा अबतक अतृप्त थी लेकिन पतिसे इस बारे में विशेष चर्चा नहीं करती थी, क्योंकि वह उनके मन को ठेस पहुँचना नहीं चाहती थी।

भद्रपुर विश्वविद्यालय में बीस साल नौकरी करने के बाद डॉ• ज्ञानशंकर नौकरी करने के लिए यह सोचकर बंबई आते हैं कि, "यहाँ शोध ग्रंथो के प्रकाशन के लिए उचित वातावरण मिल जाएगा, बडे-बडे लोगों से परिचय होगा, जिसके बलपर विश्वविद्यालय के वाइस-चेन्सलर हो सकेंगे। अत: वे वीणा के सामने बंबई जाने का प्रस्ताव रख देते हैं। वीणा भी इस प्रस्ताव का स्वागत करती है क्योंकि, वह भी भद्रपुर विश्वविद्यालय के वातावरण में उब गयी थी। अत: वह जीवनमें कुछ परिवर्तन करना चाहती थी। वह सोचती थी कि, "बंबई में उसका मन बहलाने के लिए कई साधन मिलेंगे। संभव है ऐसा कोई डॉक्टर भी मिल जाए जो उसकी मातृत्व की क्षुधा तृप्ति के मार्ग की बाधा को हटा सके।

१• अ•गो•शेवडे "इंद्रधनुष", पृ• २३•

अत: वे दोनों खुशी से बंबई आ जाते हैं। डॉ॰ ज्ञानशंकर यहाँ आकर नौकरी करने लगते हैं और वीणा भी अधिक उत्साह अनुभव करने लगती है। वह समुद्र तट की सैर, सिनेमा, होटल, मीना-बाजार की तरह चमक-दमक रखनेवाली दुकानों, आइस्क्रीम तथा भिन्न-भिन्न खाद्यान्न और आधुनिक सुख सामग्री को देखकर बहुत खुश होती है। डॉ॰ ज्ञानशंकर भी उसका उत्साह देखकर आनंदीत होते हैं और सोचते हैं कि, उनका यौवन फिर लौट आया है।

डॉ॰ ज्ञानशंकर अपने विषय के प्रकाण्ड - पण्डित थे जिसके कारण उनकी वृत्ति आत्मकेंद्रीत और अंतर्मुखी अधिक हो गयी थी। कर्म की अपेक्षा ज्ञान में अधिक रुचि थी, आचार की अपेक्षा विचार पर ज्यादा जोर था, यथार्थ की अपेक्षा कल्पना की क्षेत्र में उनका अधिक विचरण होता था। उनकी पत्नी वीणा उनके इस जीवन को समझती थी, पर पुरी तरह समरस नहीं हो पाती थी। इसतरह दोनों की जींदगी एक ही तरह बिना विशेष उतार चढाव के मंथर गती से चल रही थी। कालेज जाना, विद्यार्थीयों का घर आना, इम्तिहान, छुट्टीयाँ, पेपर जाँचना और गर्मी की छुट्टीयोंमें हो सके तो कहीं बाहर जाना। डॉ॰ ज्ञानशंकर इस जीवन में संतुष्ट थे, पर वीणा कह नहीं सकती थी कि, वह संतुष्ट थी या असंतुष्ट। बहुत उब जाती तो उपन्यास पढने लगती, किस्से कहानियों की रंगीत दुनियामें अपने आपको खोने की कोशिश करती थी। एक दिन उसके पति उस प्रलयंकर तुफानी रात में एक अनजाना अतिथि घर लाते हैं। उसका नाम दलीप था, वह दिल्ली का रहनेवाला था। कुछ साल पहले वह बंबई आया था, उम्र पच्चीस बरस की थी। कुछ दिन बेकार रहा, फिर किसी होटल में नौकरी की, वहाँ से भी निकला गया। रहने का कोई चारा नहीं था। कभी-कभी फुटपाथपर भी सोया करता था

पर पुलिसने आवारा गर्दी के नामपर पकडकर हवालात में डाल दिया। वहाँ से छुटने के बाद कभी कुछ खोंचा बेचा, तो कभी बीडी, सिगरेट, साबुन बेचकर पेट भरने लगा लेकिन कहीं नहीं टिक सका। इस तरह और कोई जगह न बचने के कारण समुद्र तट-पर जान देने के लिए आया था, तो ज्ञानशंकर उसे अपने घर ले आये। वीणा उस अतिथि को देखकर एकांत में अपने पति से कहती है - "इस आदमी को आप अपने घर क्यों ले आए ? यह तो कोई भला आदमी नहीं मालुम पडता। हम लोगों के बीच उठने बैठने के लायक भी नहीं दिखता।"[१]

वीणा अतिथि से नफरत करती है पर डॉ॰ ज्ञानशंकर उसे अपने ही कालिज के ग्रंथालयमें क्लर्ककी नौकरी दिलवाते हैं और वहीं कालिज के होस्टल पर उसका रहने का इन्तजाम भी करा देते हैं। खाने का इन्तजाम भी विद्यार्थियों के बोर्डिंग में करा देते हैं। अत: कुछ ही दिनों में वह तंदुरूस्त बन जाता है। वह अपनी बडी हुयी दाढी बनवा लेने के बाद खूब-सूरत दिखने लगता है। डॉ॰ ज्ञानशंकर के इस एहसान के बदले वह एक शब्द भी न डॉ॰ ज्ञानशंकर को तथा न उसकी पत्नी को धन्यवाद देता क्योंकि वह सोचता था कि, - "ये पढे-लिखे लोग खुदगर्ज होते हैं। सिवा अपने मतलब के और कुछ नहीं सोचते। ये त्याग करते हैं तो कभी अपने मन को समझाने बुझाने के लिए, औरों को नीचा दिखाने के लिए, औरों के सामने अपने आपको ऊँचा साबीत करने के लिए, अपने संतोष के लिए। इसलिए वे सदाचार और सद्व्यवहार करते हैं फिर इसके लिए उन्हें धन्यवाद देने की क्या जरुरत है ?"[२]

---

१. अ॰गो॰शेवडे, "इंद्रधनुष" पृ॰ १९

२. अ॰गो॰शेवडे, "इंद्रधनुष" पृ॰ २७, २८॰

वह किसी काम से एक दो बार डॉ• ज्ञानशंकर के घर आता है तो वीणा उसे नजदीकसे देखती है। तब वह सोचती है कि, "आखीर यह किस तरह का आदमी है ? उस दिन मौत के दरवाजे पर खडा था तब भी बेफीक्र। याने जींदगी और मौत, आराम और खतरा, उसके लिए कोई फर्क नहीं पैदा करते।"[१]

एक दिन डॉ• ज्ञानशंकर खाना-खाने के बाद कालेज चले जाते हैं, तो वीणा अपने प्लॅट का दरवाजा बंद करके स्वयं को बंद कर लेती है। लेकिन अकेलेपण से उब जाती है और नहाने के लिए एक-एक करके सब कपडे उतारती है और केवल रेशमी गाउन पहनकर नहाने के पहले अपने शयन कक्ष के विशाल आईने के सामने जा बैठती है। तब उसके मन में अनेक तरह के विचार आते हैं। वह धीरे-धीरे अपना गाउन नीचे सरका देती है और कटी के उपर का भाग आइने में देखने लगती है और सोचने लगती है- कि, अपने ये सुंदर उभरे हुए वक्षस्थल पुण्यपियुष जैसी दुग्ध धाराओं से रिक्त ही रहेंगे, उसका आंचल हमेशा सुखा रहेगा, क्यों, क्यों ? इस विचार से उसका मन भीतर ही भीतर विद्रोह कर उठता है।

इसके पहले वह एक दिन वह स्वयं लेडी डॉक्टर के पास जाकर जान लेती है कि, वह माता बनने में उसमें कोई दोष नहीं है तब उसके दिल में अपने पति के प्रति एक सूक्ष्म असंतोष और विद्रोह की भावना भडक उठती है और उसे लगता है कि, उसके साथ धोका हुआ है। फिर भी उपर से वह एक सुप्त ज्वालामुखी की तरह शांत थी। पर आज कई दिनों के बाद उसकी भावनाओंका आवेग फूट पडता है। उसको अपनी

१• अ•गो•शेवडे, "इंद्रधनुष" पृ• २८•

असहायता और दीनता के प्रति प्रक्षोभ होने लगती हैं परंतु कोई इलाज नहीं मिलता इसलिए वह छटपटाने लगती है। उसकी आँखोंमें आँसू आ जाते हैं, और उसके वक्षस्थलपर गीरकर नीचे की तरफ बहने लगते हैं तो वह सोचती है कि, "काश ये धाराएँ दुध की धाराएँ होती।" वीणा की इस आवस्थासे ज्ञात होता है कि, वह मातृत्व धारणा करने के लिए छटपटा रही है।। पहले भी उसे बीच-बीच में इसका अहसास होता था लेकिन आज वह ज्यादह अनुभव करने लगी थी। वह सोचती थी कि "जब से दलीप के कदम इस मकान में पडे हैं तबसे अनजाने अनबुझे यह भावना प्रबल हो उठी है। दलीप का स्मरण आते ही वह डर जाती है, फिर भी उसके प्रति आकर्षित होती ही रहती है। वह अपने ही मन में सोचने लगती है कि, "दलीप आने से उसके जीवन में इतनी आंतरीक उथल-पुथल क्यों हुयी और वह भीतर ही भीतर सिहर उठती है।" अचानक दरवाजे की घंटी बजती है और वह अपनी भाव-तंद्रीसे जाग उठती है और दरवाजा खोलती है। डॉ• ज्ञानशंकर उसे पुछते हैं कि, तुमने अभी तक नहाया नहीं, तो वह सिर में दर्द का बहाना करती है और उन्हें पुछती है कि, "आज तुम इतनी जल्दी कैसे आ गये" तो वे कहते हैं कि, - भद्रपूर से चुनाव के सिलसिलेमें तार आया है, चुनाव लढने का मेरा इरादा नहीं था पर डॉ• इंद्रजीत कहता है कि, जीतने बी अच्छी संभावनाएँ है। इन कमेटीयों के निर्वाचन पर ही वाईस-चैन्सलर का आगला चुनाव निर्भर करेगा। इसलिए अभी से तैयारी करना ही उचित है।"[1]

जब डॉ• ज्ञानशंकर चुनाव के सिलसिलेमें भद्रपूर चले जाते हैं तो उन्हे स्टेशन पहुँचाने के लिए वीणा और दलीप जाते हैं। उन्हें छोडकर दोनों घर लौट आते हैं तब वीणा दलीप को उसकी हालत के बारे में

1] अनंत गोपाल शेवडे "इंद्रधनुष", पृ• ३५

पुछती हैं तब वह रात के बारह बजे तक अपनी राम कहानी सुनाता है और उसके बाद अपनी कोठरी पर चला जाता है। उसके चले जाने के बाद वीणा उसीके विचार में रहती है। उस दिन से दलीप चार दिन नहीं आता। उसकी कहानी सुनकर वीणा का मन व्दिधावस्था में पड जाता है, क्योंकि उसके लिए वह एक समस्या ही बनी रही थी। वह दलीप आने की प्रतिक्षा भी करती थी और आ जाने से डरती भी थी। वह इस विचित्र प्रकार की अस्थिरता से अपना मन संतुलन नहीं कर सकी। इस हालत में वह उपन्यास पढती रहती, और उसके रूमानी पात्र में रम जाती थी। लेकिन ज्यादा देर तक नहीं। समुद्र की किनारे घुमने जाती तो जल्दीही लौट आती। सिनेमा देखने जाती तो बीचमेंही छोडकर चली आती। क्योंकि उसे लगता कि, उसकी गैर हजिरी में दलीप न आ जाय। वह यह भी सोच लेती है कि, पति जल्दी से जल्दी वापस आ जा तो अच्छा होगा क्योंकि उसे अकेलापन खाने लगता है। वह सोचती थी कि, कल तक उनके आने की खबर आ जाय तो अच्छा होगा परंतु कुछ ही देर बाद दलीप आकर कहता है कि, कल कॉलेज के नाम डॉ॰साहब का खत आया था और उसमें उन्होने आने की तिथि भी निश्चित की है। वे परसों सुबह की गाडीसे आनेवाले हैं।"

दलीप वीणा पर अपना प्रभाव डालने के लिए कहता है - "प्रोफेसर साहब दौरे पर जाने के बाद आपका मन कैसे बहलता है ? क्या आपको अकेला अकेला नहीं लगता।" लेकिन वह कहती है अन्य स्त्रियों की तरह जी लेती हूँ। तो दलीप कहता है - अन्य स्त्रियों के कुटुंब होते हैं, उनके बाल बच्चे होते हैं। इसतरह दलीप वीणा के कमजोरीपर ही आघात करता है। उसकी यही एक कमजोरी थी।

वीणा का स्वास्थ्य पहलेही इस समस्या से असंतुलीत हुआ था और दलीप की यह बाते सुनकर उसका मन और अधिक अस्वस्थ होता है। मन पर संतुलन न पाने के कारण और स्त्री सुलभ मातृत्व की इच्छा पूर्ती के लिए वह सब संसार नियम तोडकर अपने आपको दलीप के स्वाधीन कर देती है और वे दोनों एक दूसरे में विलीन हो जाते हैं। सुबह उठते ही वह आनंद का अनुभव करने लगती है। उसे लगता है कि, उसका घट भरा है, उसका जीवन परिपुर्ण है, लेकिन रात्री के मोह युक्त वातावरण में उसकी भावनाएँ प्रबल थी, बुध्दी और विवेक सो रहे थे। इसलिए दिन के स्वच्छ प्रकाशमें वही विवेक बुध्दी उसे कोसने लगती है कि, तू पापिनी है, व्याभिचारीणी है, पतिता है, तो उसका हृदय एक अज्ञान आशंका से कांप उठता है। डर और घबराहट के मारे आकुलता के कारण उसकी आँखों में आँसू आतें हैं।

जब डॉ• ज्ञानशंकर वापस आते हैं तो पत्नी में हुआ परिवर्तन अनुभव करते हैं, और उसका राज जानने के लिए आकुलीत हो जाते हैं। एक दिन धोबी को कपडे देते समय उन्हे एक रूमाल मिल जाता है। इससे वे वीणा के परिवर्तन का राज जान लेते हैं और उसी आशंका से वे वीणा को पुछते हैं -

"जब मैं भद्रपूर गया था तब दलीप रात को यहाँ आया था ?" तो वह कबूल कर लेती है। इसके बाद डॉ• ज्ञानशंकर वीणा से उलझे-उलझे रहने लगते हैं। एक दिन डॉ• ज्ञानशंकर को स्नेहसम्मेलन के सिलसिलेमें बडोदा जाना पडा। उस समय दलीप वीणा के पास आता है। वीणा उसे कहती है कि, डॉ• ज्ञानशंकर को अपने संबंध का पता हो गया है।

तो दलीप उसे गर्भपात करने की सलाह देता है। तब वह तपाक से जवाब देती है - "जीव हत्या ? जिसके लिए मैं जिंदगी भर तड़पती रही और जिसके लिए मैंने अपनी गृहस्थी को भी खतरेमें डाल दिया उसकी हत्या करूँ ? क्या तुम्हें कोई दया-माया नहीं है ? कलेजा नहीं है ?"[1]

दलीप जब उसकी ओर हमदर्दी से देखता है तो वह कहती है - "क्या तुम मुझसे शादी करोगे ?" तो वह उन्हें स्पष्ट नकार देता है। तब वीणा कहती है - "दलीप। तुमने दूसरी औरते देखी होंगी, पर अभी तुम उनके दिल को नहीं समझ सकते हो। अब तुम दुबारा इस तरह की बात ज़ुबान पर मत लाना भला ? वरना मेरा घेर अपमान होगा, मैं इसे बर्दाश्त नहीं करूँगी।"[2] वीणा के इस सख्त रूप को देखकर दलीप वहाँ से चला जाता है।

जब ज्ञानशंकर को वीणा माँ बनने का पता चलता है तो वह वीणा का खून करने का उपाय ढूँढ लेता है। लेकिन सोचने लगता है कि, उसकी जान जायेगी तो पुलीस पुछेगी, समाज पुछेगा, अखबार वाले पुछेंगे कि वह कहाँ गयी ? कैसे गायब हो गयी ? इसतरह अपनी बदनामी हो जायेगी जिसे वह बर्दाश्त नहीं कर सकेगा। इसलिए वह खून का विचार मन से निकाल देता है।

दिन बितते जाते हैं पर डॉ. ज्ञानशंकर का अंतर्व्दंव्द समाप्त नहीं होता, लेकिन जब वह दोनों डॉ. सुमंत तथा डॉ. सुमित्रा के संपर्क में आते हैं

१] अ. गो. शेवडे "इंद्रधनुष" पृ. ११८

२] अ. गो. शेवडे "इंद्रधनुष" पृ. १२०

तो उनके दिल का दर्द कुछ कम होता है। और दोनों सुख से रहने लगते हैं। लेकिन वीणा को सात महीने पुरे हो जाने के बाद गर्भपात हो जाता है और उसकी हालत चिंता-जनक होती है, तो डॉ• ज्ञानशंकर सोचते हैं कि, "वीणा के बिना उनका जीवन कितना अकेला और असहाय हो जायेगा। इस विचार से वह सुन्न हो जाता है और ईश्वर से प्रार्थना करने लगता है कि, "हे भगवान। एक बार मुझे मौका दो, एक बार ताकि मैं वीणा को बता सकूँ कि, सब कुछ हो जाने के बाद भी वीणा मेरी ही है, वह मेरे रक्त-रक्त में समाई है।"[१]

जैसे-जैसे वीणा का स्वास्थ्य सुधरता जाता है वैसे ही उसके जीवन में उत्साह और रस आने लगता है। बाद में दोनों " उटी-उटकमण्ड" को जाते हैं तो सुबह होते ही वह आकाश की ओर देखते हैं। आकाश में उन्हे "इंद्रधनुष" दिखाई देता है और यही इंद्रधनुष उनके जीवन पर छा जाता है और जीवन आनंदमय होता है।

(११) "अमृत कुंभ" की "पालीन" -

शेंवडे लिखित "अमृत कुंभ" उपन्यास की नायिका "पालीन" न्युयार्क की रहनेवाली थी। वह फिफ्थ एवेन्यु के एक डिपार्टमेंटल स्टोअर्स में सेल्स गर्ल का काम करती थी और अपने फ्लॅट में अकेले रहती थी। उसका जन्म प्राकृतिक सुषमासे सुशोभित वेलॅण्ड की वन उपत्यका में हुआ था। यह स्थान अमेरिकाके श्रेष्ठ दार्शनिक एवं ऋषितुल्य विचारक एमर्सन और थोरो का निवास कॉन्कर्डसे दूर नहीं था। पालीन का बचपन इसी रम्य

१] अनंत गोपाल शेंवडे "इंद्रधनुष" पृ• १४८•

वातावरणमें बीता था। वह एक बुद्धिमान भाव-प्रवण और संवेदनशील लडकी थी, जो जीवन को कुछ बनाना - गढना चाहती थी, लेकिन न्युयार्क ने इसके सारे सपने और आकांक्षाओं का गला घोंट दिया था। न्युयार्क के बारेमें वह कहती है, "इस महानगर के पास हृदय नहीं है, आत्मा नहीं है। यह एक विराट अमानवीय निर्मम चक्र है, जो अपनी गीतसे चलता रहता है, और उसकी दबोचमें जो आता है, उसे पीसता जाता है।"[1]

वह आत्मिक शांति के लिए न्युयार्क में भटकती रहती है। वह ऐसे लोगोंसे मिलती है जो अपने आपको योगी और संन्यासी कहते थे। लेकिन उसे उनकी वाणी में सत्य और प्रामाणिकता का स्पर्श नहीं मिलता था। उनमेंसे कुछ सन्यासी के नामपर सुख चैन और विलासिता के जीवन बीता रहे थे। पालीन ने यह जान लिया कि, वे वासना के भूखे थे। उनके पास शब्द विलास और पांडित्य की बहुलता होती, पर चैतन्य का स्पर्श नहीं रहता। इस भयंकर पाशविक शक्तिसे वह उब गयी थी।

वह भारत को अध्यात्मिकता का घर मानती थी, जहाँ विश्व के कोने-कोने से उसके जैसे हजारों युवतियाँ आत्मिक शांति की तलाश में आती रहती थी। उसके मन में भारत के प्रति आकर्षण, कुतुहल था। वह जानती थी कि, "यह वही देश था, जहाँ हिमालय की गुफाओंमें, गंगा के तटपर, उपनिषद कालीन ऋषि-मुनियोंने, शाश्वत एवं चिरंतन सत्य के संगीत का गायन किया था। जिसकी प्रतिध्वनि उसी के देश के थोरो, एमर्सन और व्हिटमैन जैसे दार्शनिक विचारों को एवं कवियों की वाणी में सुनाई देते थे।"[2] इसलिए वह इससे आकर्षित होकर आत्मिक

१] अ॰गो॰शेवडे "अमृत-कुंभ" पृ॰६५

२] अ॰गो॰शेवडे "अमृत-कुंभ" पृ॰६५

शांति के लिए भारत आ जाती है।

भारत में वह हरिपुरा गांव में आती है, और वहाँ उसकी उपन्यासका नायक सत्यकाम से मुलाकात होती है। सत्य काम भी बंबई में रेयॉन फॅक्टरीमें मॅनेजर था, लेकिन वह भी वहाँ के वातावरण से ऊब गया था। अत: वह अपनी माँ के आदेशों का पालन करने के लिए और आत्मिक शांति के लिए विश्वभ्रमण करने निकला था। भ्रमण करते-करते हरिपुरा में तीन साल पहले स्थित हुआ था।

पालीन के मनमें हरिपुरा का आकर्षण बढ जाता है। वहाँ से उसे जाने की इच्छा नहीं होती। वह मंदिरोंमें जाती, प्रभात की आरतीमें सम्मिलित होती, रासलिलाओं का आनंद लेती, पर उसके समजमें नहीं आता कि, क्या कृष्ण ही इस का अंतिम उत्तर है ? यह प्रश्न वह सत्यकाम से भी पुछती है तो वह कहता है - "ईश्वर के प्रासाद में जाने के अनेक मार्ग है पालीन। देखती नहीं यमुना नदी तक पहूँचने के लिए अनेक रास्ते हैं, पर यमुना का जल तो वही है।"[1]

इसके बाद वह भारत भ्रमण करने की सोचती है, लेकिन कहाँ से प्रारंभ करे इसके लिए उसे कुछ जानकारी न होने के कारण वह सत्यकाम से पुछती है, तो वह कहता है - "अब तुम दक्षिण भारत जाओ। वहाँ से पूर्वी भातर का भ्रमण करो और मन भरणे के बाद यहाँ लौट आओ। बादमें हम दोनों मिलकर उत्तर दिशा की ओर हिमालय प्रवास के लिए चलूं।" तब वह दक्षिणमें कई स्थानोंपर जाकर वहाँ के लोगों से मिलती है।

१] अ॰गो॰शेवडे "अमृत-कुंभ" पृ॰ १२८॰

कभी उसे आनंद की प्राप्ति होती है, सुख मिलता है तो कभी कष्ट, वितृष्णा भी होती है। कुछ लोग ज्ञान और दर्शन की बाते करते थे, तो कुछ योग सिखाने के बहाने उसके गौर वर्ण मांसल शरीर के स्पर्श की वासना रखते थे। यहाँ उसे कुछ घर गृहस्थीवाले पुरुष भी मिले जिन्होंने उसका स्नेह से स्वागत किया और अपने परिवार में समा लिया।

दक्षिण में उसने अनेक मंदिर, दुर्ग, ऐतिहासिक खंडहर देखे, जो भव्य विशाल कला और स्थापत्य की दृष्टि से अद्भुत एवं अपूर्व थे। वहाँ की संस्कृति और जीवन प्रणाली आज भी प्रेरणा देती है। मंदिर के दिवालोंपर प्रस्तर की विविध भाव भंगियोंमें विकिर्ण मूर्तियोंको उसने निकट से देखा। इन मंदिरोंमें देवी देवताओं के दर्शन किये। उनके गर्भगृह और गुम्बज वैदिक मंत्रों के उच्चार से अनुगुंजित हो उठते थे। उसने उन मूर्तियों के सामने सीधे सरळ भक्त गण अपने पेटके बल पर लेटकर हाथ पैर फैलाकर संपूर्ण समर्पण मुद्रासे भगवान की आराधना करते हुए देखकर उनके प्रति वह प्रभावित हो गई।

दक्षिण भ्रमण के बाद फिर वह हरिपुरा में आकर सत्यकाम को हिमालय की ओर चलने के लिए कहती है लेकिन सत्यकाम कुछ दिन उसे हरिपुरा में ही रहने के लिए कहता है। धीरे-धीरे उसका मन हरिपुरा में रमने लगता है और उसे ग्रामीण जीवन का अधिक निकटसे यथार्थ परिचय हो जाता है। वहाँ के रीति-रिवाज, त्योंहारोकी उसे जानकारी मिलती है। वह देखती है कि एक दिन गाँव की विवाहित स्त्रीयाँ और शादी शुदा युवतीयाँ बड की पुजा करने जाती है, मन्नते माँगती है। नाग देवता को दूध पिलाती है, उसे नमस्कार करती है। तब सत्यकाम से वह कहती है कि, "हरिपुराने मुझे बहुत सिखाया सत्यकाम, बहुत कुछ दिया। कुछ दिन यहाँ रहने की तुम्हारी कल्पना बहुत अच्छी

थी। इस अनुभव के बिना तो मेरा ज्ञान अधूरा रह जाता, मैं तुम्हारे देश को समझ ही नहीं पाती।"[1]

इसके उपरांत वे दोनों हिमालय की ओर चले जाते हैं। यहाँ पहाडी मार्ग पर चलने में पालीन को बहुत तकलीफ होती है, लेकिन वह भीतर से दृढ थी, इरादे की पक्की थी। इस अनुभव को उसने एक चुनौती जैसा ही स्वीकार किया था। अत: वेदोनों पांडुकेश्वर से बद्रीनाथ पर पहुंचते हैं वहाँ वे बद्रीनाथ का दर्शन करते हैं और आगे चलकर मणि भद्रपुरी से अलकापुरी पहुंच जाते हैं। वहाँ के दृश्यों को देखकर पालीन भाव विभोर होती है और सत्यकाम को कुछ दिन यहाँ ठहरने के लिए कहती है। उसी रात पालीन भावावेग के कारण सत्यकाम के पास आ जाती है। सत्यकाम भी उसे छाती से लगा लेता है और पालीन भी एक प्रणाय दग्ध नारी के उत्कट भावावेग के साथ उसको अलिंगन देती है। इस तरह अंतमें पुरुष और प्रकृति का संयोग हो जाता है।

निष्कर्ष -

शेवडे के उपन्यासों के चित्रित नारी पात्रों को देखने के बाद नारी मन की गहराई का अहसास बडी मार्मिकता से हो जाता है। हर एक नारी पात्र अपनी अलग अलग विशेषताएँ लिए हुए सामने आती है। शेवडेने नारी के अंतर्मन के भाव विश्व को बडें कुशलतासे चित्रित किया है। उन्होंने आधुनिक नारी की समस्याओं को सुक्ष्म दृष्टिकोणसे चित्रित किया है। उनको अनेक समस्याओं का सामना करना पड रहा है, इन

१] अ॰गो॰शेवडे "अमृत-कुंभ", पृ॰१४६॰

समस्याओं पर शेवडेने अपनी लेखनी बडी कुशलता से चलायी है। पाठक आधुनिक नारी के भविष्य तथा समस्याओं के प्रति सचेत होकर सोचनेपर मजबूर होता है।

निष्कर्ष रूपमें शेवडे के नारी पात्रों को देखने के बाद हम यह कह सकते हैं कि शेवडे ने आधुनिक नारी समस्याओं पर अलग नजर से विचार करते हुए हमारे सामने प्रस्तुत करने का प्रयास किया है इसी कारण इनके नारी पात्र सजीव बनते दिखाई देते हैं।